चतुर्थ अध्याय

"डॉ. शंकर शेष के आलोच्य नाटकों में चित्रित समस्याएँ"

" डॉ.शंकर शेष के आलोच्य नाटकों में चित्रित समस्याएँ "

(अ)'घरौंदा', (ब)'एक और द्रोणाचार्य', (क)'पोस्टर'

मानवी जीवन का साहित्य से और साहित्य का साहित्यकार से कभी न टूटनेवाला रिश्ता होता है। साहित्यकार समाज में रहता है। समाज में जो भी घटनाएँ घटीत होती हैं। उसका असर साहित्यकार की कृति में दिखाई देता है। डॉ. शंकर शेष जी समर्थ नाटककार थे। उनके नाटकोंपर यथार्थवाद का प्रभाव दिखाई देता है। उन्होंने हमारे वर्तमान समाज के सभी वर्गो का चित्र ज्यों का त्यों ऑकने का प्रशंसनिय प्रयास किया है। आलोच्य नाटकों का अध्ययन करने के उपरान्त ऐसा प्रतित होता है कि सभी पात्र हमारे आसपास पड़ोस के ही हैं।

उनके नाटकों के संवाद प्राय: विषयानुकूल, समयानुकूल संक्षिप्त, चुटीले एवं सरस हैं। संवाद पात्रों के व्यक्तित्व का उद्घाटन करने में समर्थ है। समस्याओं को समझने की शक्ति हमें संवादों से प्राप्त होती हैं। विषयवस्तु में वैविध्य लेकर जीवन के सभी पहलूओं को अपने नाटक के विषय के रुप में चुनकर उन्होंने बड़ी सजगता के साथ चित्रित किया है। उनका प्रमुख उद्देश पाठक के चिंतन को उद्बद्ध कर देना है।

स्थूल अध्ययन के उपरान्त कुछ क्षण लगता है कि 'घरौंदा' यह महानगरीय मध्यवर्गीय समस्यापर, 'एक और द्रोणाचार्य' यह शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार पर और 'पोस्टर' यह आदिवासियों के शोषण पर आधारित नाटक है। किन्तु सूक्ष्मता के साथ गहरा अध्ययन करने के बाद हमे समाज में व्याप्त सभी समस्याएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

शिक्षा, धर्म, राजनीति, विज्ञान और अर्थ के क्षेत्र में अमुलाग्र परिवर्तनवादी नवीन क्रांति से पारिवारिक जीवन बड़ी मात्रा में प्रभावित हुआ है। परिणामस्वरुप पारिवारिक जीवन में अनेक प्रकार की समस्याएँ मंडराने लगी। बाह्य परिस्थितियोंसे वशिभूत होकर आज का मानव अनेक समस्याओं से जूझता हुआ दिखाई देता है। परिवारिक और आर्थिक स्थिति, के तनाव एवं दबाव के कारण जो समस्याएँ प्रज्वलीत हो उठती है उनकी अंतर्बाह्य टकराहटों में अंतर्निहित नाटकत्व को डॉ. शंकर शेष जी ने पहचानकर

नाट्यबद्ध किया है।

4.1 पारिवारिक समस्या -

4.1.1 मकान की समस्या -

किसी भी परिवार की प्रमुख आवश्यकता मकान की होती है। मौसम की मार से बचने और अपने गृहस्थी के फैलाव का इंतजाम करने के लिए 'मकान' आवश्यक है। लेकिन मुंबई जैसे महानगर में बढ़ती हुई आबादी के परिणाम स्वरुप आज मकान की समस्या ने उग्र रुप धारण किया है। मध्यवर्गीय आदमी एक छोटे से मकान का सपना संजोगकर जीता है और पूरी ज़िंदगी भर उसको साकार करने हेतु संघर्षरत रहता है। डॉ. शंकर शेष इस समस्या के जड़तक पहुंच गये हैं। 'घरौंदा' नाटक के प्रथम दृश्य में सुदीप द्वारा टेलीफोन पर जो बातचित होती है उसके संवाद इस समस्या पर प्रकाश डालते हैं। - "आज रात देरी से लॉज लौंटू ? क्यों ? फिर वही ..... चोपडा फिर उसे ला रहा है। लेकिन गुहा आय डू एग्री ..... हर एक को सेक्स चाहिए यह बात मै जानता हूँ। लेकिन दस बजे राज तक मैं घूमूंगा कहाँ। ठीक है, बट आय डोन्ट लायक आल दिस, देयर शुड बी ए लिमिट टु एव्री थिंग। कहाँ से बोल रहे हो ? बोरिवली से ? वही मकान का चक्कर ? बढ़े रहो डियर " [1] सुदीप, गुहा, अब्दुला और चोपडा यह मध्य वर्ग के प्रतिनिधिक पात्र के रुप में सामने आते हैं। चारों को मकान की समस्या ने घेर रखा हैं। रहने के लिए मकान न मिलने के कारण परिस्थिति से समझौता करते हुये उन्हें एक लॉजपर रहना पडता हैं।

अब्दुल शादीशुदा ही नही, दो बच्चों का बाप है। ग्यारह साल से बीवी गाँव में है। गुहा की शादी अभी पिछले साल हुई। रात को बैठा-बैठा अपनी बीवी को चिट्ठियाँ लिखा करता है। चोपडा ने तो पूरी तरह से मकान की रामस्या के सामने घुटने टेक दिये है। ज़िंदगी को कटी पतंग की तरह छोड़ दिया है। निराश होकर उसने शादी का इरादा ही छोड दिया है। हफ्ते-पंद्रह दिनों में या तो फोरास रोड चला जाता है या लॉजपर कोई लडकी लाता है। सुविधा के लिए सुदीप और चोपडा एक बात तय करते हैं। जब एक पार्टनर लॉज के रुमपर गर्लफ्रेंड लाता है तो दूसरे को बाहर रहना होगा। इसी समझौते के अंतर्गत सुदीप को रात के दस बजे तक बाहर समय काटना पडता है। इस प्रकार घरौंदा नाटक के चार पात्रों की समस्या चार प्रकार की हैं। जिन्होंने शादी की वे मकान की समस्या के कारण गाँवसे बीवी को ला नहीं सकतें, मकान के अभाव में चोपडा और सुदीप शादी कर नही सकतें। सबके सामने सवाल खड़ा है - बीवी को

रखेंगे कहाँ ? बीस हजार से कम पगडी नहीं। पचास हजार से कम ओनरशिप का फ्लैट नहीं। किराये पर कोई मकान देता नहीं। मकान के अभाव में हर आदमी अपने आप को अपाहीज और बेसहारा महसूस कर रहा है।

नाटककार स्पष्ट करना चाहता है कि व्यक्ति का पारिवारिक जीवन विघटनशीलता के किस कगार पर खड़ा है। व्यक्ति न चाहते हुए भी भौतिक, आर्थिक, यांत्रिक दबाव में ग्रस्त होकर अपने आप को 'छोटा' और बेसहारा महसूस कर रहा है। सुदीप को मकान एक सपने जैसा लगता है और उसे विश्वास हो गया है कि यह सदा के लिए सपना ही रहेगा। कालांतर के बाद उसे सपनों से घृणा लगने लगती है। एक तरफ घर हो तो कोई इंतजार करे, कोई होतो इंतजार करे कहकर अपने आप को बेसहारा अकेला समझने वाला सुदीप तो दूसरी तरफ छाया का बड़ा परिवार होने पर भी - " एक कमरे का घर, यह हर आदमी यही चाहता है कि दूसरा बाहर रहे " [2] महानगर में रहनेवाले मध्यवर्गीय एवं निम्न वर्गीय परिवार इस यंत्रणा बोध के शिकार होकर विखंडीत होते जा रहे है। रक्तसंबंध होने पर भी एक दूसरे से भावात्मक तादात्म्य पा नहीं सकते हैं। मकान की समस्या ने इतना उग्र रुप धारण कर दिया है कि घरौंदा का हर मध्यवर्गीय पात्र इससे अछूता नहीं रह सका है।

अपनी क्षमता को नजरअंदाज करते उच्च स्तर की सुख भोग कल्पनाओं की चाह के लिए की गई अंधीदौड व्यक्ति को पूरी तरह तबाह कर के रख देती है। इस समस्या का एक अलग पहलू दिखाने का प्रयत्न नाटककार ने किया है। चाल में रहनेवाली छाया 'चाल' संस्कृति से घृणा करते हुए ओनरशिप फ्लैट का सपना देखती है। यह सपना सच करने के लिए सुदीप और छाया जी तोड कोशिश करते हैं। सुदीप उसी खोज में कांदीवली, बोरीवली, मुलुण्ड कभी डोम्बीवली तो कभी अंधेरी भागता रहता है। निराश होकर छाया को समझाने की कोशिश करता है - " एक दिन समझ में आ जाएगा। पंख हैं लेकिन उडने के लिए नहीं, सिर्फ़ जमीन पर दौड़ने के लिए। हम दौड़ते रहेंगे, समय के पठार पर घायल तीतरों की तरह। " [3]

छाया सपनों से विन्मुख होना पसंत नहीं करती। 320 फुट के फ्लैट की प्राप्ति के लिए वह पैसों की बचत का रास्ता चुनती है। प्रेमी सुदीप की सिगरेट पर, अपनी चाय पर, सिनेमा आदि मनोरंजन पर अंकुश लगा देती है। सुदीप के लिए दोपहर के वक्त केवल पाव और बड़ा केवल पचास पैसे का लंच और शाम को केवल राइस प्लेट। सपनोंका ताजमहल के सपने देखते देखते वह शरीर को भूखा मारते हुए छाया एक फटी साडी में अपनी रोजमर्रा की ज़िंदगी खंड़हर बनाती है। उनकेद्वारा बचाये पैसों को पहली

बार बिल्डर मजे से निगल देता है। सुदीप और छाया की तरह बिल्डर के पास पैसे जमा करनेवाला गुहा इस हादसे को सह नहीं पाता। इसी कारण रेल के पटरीपर आत्महत्या कर देता है। सुदीप छाया के द्वारा दूसरी बार पैसे जुटाने पर चाल के कमरे का मालीक पैसे हड़प कर देता है। इस 'मकान समस्या' के कारण सुदीप का संतुलन टूट जाता है और विपथगामी बनकर छाया को खो देता है।

महानगरीय व्यक्ति की कमनसीबी यह होती है कि अपने सपनों का 'घोसला' खरीदने सपनों में इतना खो जाता है कि इसके पीछे दौडने के खेल में समझमे नहीं आता की कब बुढ़े हो गये। संवादों के माध्यम से महानगर में व्याप्त 'मकान' की असफल लढ़ाई की ओर संकेत देता हुआ सुदीप कहता है - " शरीर का ताजगी का भी जिंदगी में एक अर्थ होता है, छाया। खुबसूरत मकान में अगर लाशों जैसे ठंड़े शरीर पास आ भी गए तो क्या फ़ायदा। कांक्रीट की दीवारें उसमें ताप नहीं पैदा करेंगी, उल्टा उस स्पर्श में ढेर-सी बर्फ भर देंगी।" [4] इस प्रकार डॉ. शंकर शेष जी ने 'घरौंदा' नाटक में मकान की समस्या का कोना-कोना छान मारा है।

पारिवारिक समस्याओं के अंतर्गत गरीबी की समस्या, अर्थ केंद्रीत रिश्तों की समस्या, काम संबंधों की समस्या आदि समस्या आती है। किंतु यही समस्याएँ आर्थिक समस्या और मूल्य विघटन की समस्या के अंतर्गत आने के कारण उन विभागों में उनका अध्ययन करना जादा सुविधाजनक होगा।

4.2 आर्थिक समस्या -

अर्थोउन्मुख दृष्टि होने के कारण आर्थिक समस्या विशाल रुप धारण कर चुकी है। मनुष्य को पुच्छविहीन पशु बना देनेवाली आर्थिक परिस्थितियाँ अधिकाधिक कठिन, बिकट एवं दृढ बनती रही हैं। आधुनिक मानव की आकांक्षाएँ बढ़तीं जा रही है। अतृप्ति के कारण स्तरिकरण और स्वार्थी सुविधाभोग की एक दिशाहीन लक्ष्यहीन दौड शुरु है। आर्थिक समस्या जटिल समस्या है। आज आर्थिक संपन्नता पर प्रतिष्ठा का मानदण्ड निर्भर रहता है। सामान्य व्यक्ति तिरस्कृत और उपेक्षा का पात्र हो गया है इसी बात का व्यंगपूर्ण समाचार नाटककार ने लिया है। 'पोस्टर' नाटक में किर्तनकार कहता है। - " ग्रंथों मे भी लिखा है।

धनमाहुः परं धर्मं धने सर्व प्रतिष्ठितम।

जीवन्ति धनिनो लोके मृता ये त्वधना नरा :।

यानी धन प्राप्त करना ही श्रेष्ठ धर्म है, क्योंकि धन पर ही सब कुछ निर्भर करता है - धनवान लोग ही असली अर्थ में जीते हैं, निर्धनों की गणना तो मुर्दों में होती है" [5] 'अर्थ' प्राप्ति हेतु आज इस्तेमाल तंत्र पनप रहा है। दूसरों का शोषण करके अपनी पिपासा शांत करने की क्रूर लालसा आदमी को सैतान बना रही हैं। इस आर्थिक समस्या के मूल तक पहुँचने का प्रयत्न डॉ. शेष जी करते हैं। "आज के तो सभी सवाल धन से जुड़े हुये है। सभी संघर्षो की जड़ में यही धन है। एक तनका है जिसके पास धन के पहाड़ है और दूसरे के पास शाम की रोटी तक नहीं। धन का सही बंटवारा, न्यायपूर्ण बंटवारा ही आज के सामाजिक न्याय का मूल सवाल है।" [6]

4.2.1 गरीबी की समस्या -

अर्थ के अभाव के कारण अतृप्त और हीनताओंसे आक्रांत सर्वव्यापी मानव का चित्रण डॉ. शंकर शेष जी ने महानगर्राय और आँचलीक सभी पृष्ठभूमिपर यथार्थ रुप से किया है। आज का जीवन 'अर्थ' के बीना 'अर्थहीन' बन गया है। 'अर्थ' हमारी सामाजिक व्यवस्था की 'ईकाई' बन गयी है। अर्थ की कमी एवं गरीबी आज एक अभिशाप बन गई है।

'पोस्टर' नाटक के माध्यम से शेष जी ने आदिवासी लोग अर्थ के अभाव में जो कठिन और भयावह जीवन गुजार रहे हैं उसपर व्यंगपूर्ण भाषा में प्रहार किया है। 'पोस्टर' नाटक में गॉव के लोग कम मजदूरीपर अपना पानी की तरह खून-पसीना बहाते हैं जिससे उनकी रोजमर्रा की सामान्य जरुरते भी पूरी नहीं हो पाती ? - " मालिक की मेहरबानी से हर एक के पेट में दो रोटी पहुँच जाती थी। और सभ्यता की रक्षा के लिए शरीर का जो भाग ढ़कना जरुरी है वही भी ढ़क जाता था।" [7] अन्न और वस्त्र भी 'हक' से नही मालिक की मेहरबानी समझकर लेते थे। सिर्फ़ लंगोटी पहनकर लिबलिबाते किड़े मकौड़े की ज़िंदगी बसर रहे थे। उनका ही नहीं पूरे देश में व्याप्त गरीबी का चित्र खींचते हुए कीर्तनकार का साथी व्यंगपूर्ण शब्दों मे कहता है - " तो सब रुखा सुखा खाकर ठंडा पानी पी रहे थे... दो रोटी .... एक लंगोटी .... और मुख में हरिनाम ..... इसके आलावा क्या चाहिए इस पुण्यभूमि भारतवासी को " [8] इस के साथ साथ - " जीना चाहे महँगा हो पर, मौत बहुत ही सस्ती थी " [9] ऐसे कथनों से गरीब आदिवासी जीवन का नग्न सत्य सामने लाने की कोशिश नाटककार करता है।

'एक और द्रोणाचार्य' में अधिक स्पष्ट रुप से 'अर्थ' की कमी आदमी का किस प्रकार

अवमूल्यन करा देती है इसका चित्रण हुआ है। एक और द्रोणाचार्य नाटक के तीसरे दृश्य में पुनः प्रकाश होने पर 7-8 वर्षीय अश्वत्थामा भूमि पर घिसटता और दूध पीने के लिए रोता-मचालता नजर आता है। अभी गो-रस न मिलने पर वह सिर पटक कर अपने प्राण देने की धमकी देता है। सचमुच ही वह धरतीपर सिर पटकाना शुरु कर देता है। माँ कृपी उसे दूध देने का आश्वासन देती है। दूध के नाम पर आटे का घोल पिलाती है। माँ द्वारा लाये 'दूध' वास्तव में आटे का घोल को पीकर अश्वत्थामा किसी क्षत्रिय कुमार को अपने घर में भी गोरस होने की बात बताने के लिए चला जाता है। द्रोणाचार्य के टोकने पर कृपी कड़वा सच बतलाती है - " पीता नहीं तो कहाँ जाता ? आँचल छूटने के बाद कभी दूध पिया होता तो याद रहता दूधका स्वाद दूध के नाम पर जहर देती तो भी पी लेता कभी अपने लडके की हड्डियाँ गिनी तुमने ? भिख मंगे का लडका कहलाता है तुम्हारा बेटा। मुझसे पूछो, कैसे जुटाती दो जून की रोटी-" [10] कृपी द्वारा किया गया यह कठोर प्रहार गरीबी की ओर संकेत करता है। इसी गरीबी के सामने झुककर कृपी राजपुत्रों के आचार्यपद ग्रहण करने के प्रस्ताव को बीना सोचे स्वीकार कर देती है और द्रोणाचार्य के सामने तर्क प्रस्तुत करती है कि अनाज और कपडे की समस्या हमेशा के लिए मिट जाएगी। कुछ सन्मान से रह सकेंगे। द्रोणाचार्य जैसे 'बड़े' आचार्य के घर की यह स्थिति है तो सामान्य परिवार की स्थिति कैसी होगी ?

दूसरी तरफ आधुनिक काल के द्रोणाचार्य का प्रतिनिधित्व करने वाले अरविंद के घर की स्थिति जादा अलग नहीं है। माँ कैन्सर से अस्पताल में पड़ी है। विधवा बहन हर पहली तारीख को मनीऑर्डर का इन्तजार करती है। लडके को मेडिकल कॉलेज भेजने की समस्या मुह फैलाए खड़ी है। इन सभी से परेशान अरविंद की पत्नी लीला कहती है - " जानते हो, किस तरह घसीट रही हूँ तुम्हारी गृहस्थी की गाड़ी ? एक-एक पैसे की खींचतान मची हुई है। " [11] यह शिकायत केवल मात्र लीला की नहीं है बल्कि समाज के गरीब परिवार की सभी औरतों की रोजमर्रा की समस्या है।

मध्यवर्गीय जीवन में अर्थ की कमी एक अभिशाप बन गयी है। इसकी झलक घरौंदा नाटक में यंत्र-तंत्र दिखाई देती है। अपनी भावनाओं, इच्छाओं और पेट को भूखा रखकर मकान के लिए जुटाने वाले सुदीप-छाया, अच्छे गुण प्राप्त करने के बाद अगली पढ़ाई के लिऐ अमरीका जाने का मौका पैसों के अभाव में हाथ से छूटने की आशंका से छटपटानेवाला गोविंद, अब खाने-पीने के मामले में कंजूसी बंद बहुत हो चुका वनवास ' ऐसा खत मे लिखकर गुहा के प्रति कारुण्यभरा प्रेम व्यक्त करनेवाली उसकी पत्नी,

'मकान' की समस्या से परेशान गुहा, अब्दुला, सुदीप, छाया सभी पात्र अर्थ की कमी की समस्या को उजागर करते हैं।

4.2.1 महंगाई की समस्या -

आज कालाधन, कालाव्यापार तेजी से शुरु है। मिलावट करके और वस्तुओं के दाम बढाकर ग्राहकों को लूटा जाता है। परिणाम स्वरुप आय और व्यय का प्रमाण 'व्यस्त' होने के कारण मध्यवर्ग त्रस्त है। दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही जीवन की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति असंभव बन गई है। 'एक और द्रोणाचार्य ' की लीला पहले ही दृश्य में इसके और अंदेशा करती है - " जानते हो शक्कर क्या भाव चल रही है ? पूरे चार हो गयी। " [12]

'घरौंदा' में सुदीप और छाया मंहगाई के कारण बेतहाशा दौडते रहते है। हर बार बढ़ती हुई मंहगाई के कारण सपना हाथों से फिसलता है। फ्लैट के लिए पहली किस्त पाँच हजार की होती है। दो सालों में वह पाँच हजार इकठ्ठा कर लेते है लेकिन तबतक पहली किस्त सात हजार बन जाने के कारण दोनों के सपने चकनाचूर हो जाते हैं।

अमिरों को त्रस्त करनेवाला महंगाई का किस्सा अनोखा है। धनवान पटेल मजदुरों से कहता है - " जानते हो इंपोरटेड व्हिस्की के भाव क्या चल रहे है ... होटल के किराये क्या हो गएँ है ..... पेट्रोल का भाव क्या हो गया है। साले महँगाई से हमारी कमर नहीं टूट रही है क्या ? " [13] इस व्यंग के साथ साथ मंहगाई की मार ने हर व्यक्ति की कमर पूरी तरह टूटी हुई है। साप्रतिक जीवन का यह सत्य आलोच्य नाटकों में बड़ी खुबी से रेखांकित हुआ है।

4.2.3 बेरोजगारी की समस्या -

आज भारतवर्ष में बेरोजगारी की समस्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही है। आज करोडों युवक बेरोजगार है। इस समस्या के प्रभाव से पारिवारिक, सामाजिक समस्या, नशाखोरी आदि अनेक समस्याओंका निर्माण हो रहा है।

'एक और द्रोणाचार्य' में विमलेंदू की पत्नी बेरोजगारी की शिकार हो जाती है। पति के मौत के बाद नौकरी की तलाश में दूर-दूर भटकती है सब आश्वासन देते है। नौकरी कोई नही देता । उसे

योग्यता के अनुरुप काम और वेतन मिलता नहीं। बेरोजगारों की भीड़ में समा जाती है। केवल महानगरोंमें बेरोजगारी होती है ऐसी बात नहीं होती। देहातों में अनपढ़ बेरोजगार लोगों की कमी नहीं है। 'पोस्टर' नाटक में पटेल मजदूरों का शोषण इसी के बलबूतेपर करता हुआ कहता है। - " बाहर से छप्पन आदमी बुला लूँगा। साले कमी है क्या बेकारों की। " [14] नाटककार आर्थिक समस्या के इस पहलू पर प्रकाश डालते दिखाई देते है।

4.2.4 भ्रष्टाचार की समस्या -

भ्रष्टाचार का सीधा सरल अर्थ है, भ्रष्ट आचार अर्थात व्यक्ति का ऐसा व्यवहार जो सामाजिक मूल्य, नियम तोडकर स्वयं का 'स्वार्थ' पूरा करने हेतू किया जाता है। भ्रष्टाचार तो आर्थिक समस्या की महत्वपूर्ण कड़ी है। भ्रष्टाचार ने समाज की वर्तमान पीढ़ी के विकास को तो अवरुध्द कर ही दिया है। भावी पीढ़ी के सपनों को भी कुण्ठित कर दिया है।

आज भ्रष्टाचार ने शिक्षा क्षेत्रपर भी अपना कब्जा जमा लिया है। जादातर शिक्षा संस्थाएँ भ्रष्ट पूंजिपतियों की जेबों में समायी गई है। वास्तव में शिक्षा संस्थाएँ यह संस्कार केंद्र होते हैं। यदि वहीं भ्रष्टाचार के उगमस्थान हो तो वहाँ तो हम छात्रोंपर किस प्रकार के अच्छे संस्कारों की उम्मिद रख सकते है। 'एक और द्रोणाचार्य' में यही सवाल नाटकाकर ने उठाया है। अरविंद जैसे अध्यापक ने व्यवस्था के हाथ अपने आप को बेच देता है। अर्थ एवं सुखसुविधा का मोह उसे कर्तव्यपथसे हटा देता है। पदोन्नती पाकर प्रिन्सिपल बनने के लिए प्रेसिडेन्ट के हाथों बेच जाता है। राजकुमार के विरुध्द दर्ज की गई परीक्षा में नकल की रिपोर्ट वापस लेता है। उसकी यह कृति नैतिक विकास और प्रगति के सभी लक्षण -लाभों को समाप्त कर अध्यपकों के आदर्शों का दिवालियापन घोषित करती है।

शिक्षा संस्था चलानेवाला प्रेसिडेन्ट तो भ्रष्टाचार की प्रतिमूर्ति है। उस कमीने आदमीने दुकानों की तरह बीस शिक्षण संस्थाएँ खोल रखी हैं। साथ ही लेन देन का व्यापार करता है। शिक्षण संस्थाओं के लाखो रुपये ग्रँट का उपयोग यह शिक्षणशास्त्री अपने लेनदेन के व्यवसाय में करता है। इस पुँजी से हजारों रुपये कमाकर कॉलेज को लौटा देता है। यह धंदा जाने कितने वर्षो से चलता रहा है। कभी कुछ नहीं हुआ है।

प्रिन्सिपल बने अरविंद पर दबाव डालकर सभी अध्यापकों से पाँच सौ की रसीद ले कर तीन सौ वेतन देता है। भ्रष्टाचार का गोरखधंदा आराम से चलता है। शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त यह भ्रष्टता भविष्य में राष्ट्र के अन्तर्मन को खोखला बना देती है। शिक्षा-क्षेत्र में भ्रष्टाचार की जड़े इतकी गहरी हो गई है उन्हें देख-सुनकर कभी कभी मानवीय सद्भावों से विश्वास ही उठने लगता है। 'एक और द्रोणाचार्य' के माध्यम से अर्थकेंद्रित शिक्षा के शाम पक्ष को नाटककार ने समर्थता से चित्रित किया है।

'पोस्टर' नाटक का खलनायक पटेल तो भ्रष्टाचार का स्वीकार पूरे गाँव के सामने खुलेआम करता हुआ कहता है। - " चार रुपये दूँगा तो मै क्या खाऊँगा फिर इनकम टैक्स, सेल्स टैक्स, पार्टियों को चंदा, अफसरों को रिश्वत, अखबारों में विज्ञापन.... तुम्हारा बाप देगा " [15] ग्रामों में खुले आम भ्रष्टाचार की स्वीकृति मन को झंझोड डालती है। तो दूसरी तरफ 'घरौंदा' का बिल्डर गरिबों का पहले मसिहा बनकर बड़े सफाई से लूटता है। चोबीस लोगोंके सपने एक गठरी में बांधकर चुपचाप चोरों की तरह भाग जाता है। लेकिन बिल्डर का कोई कुछ बिगड़ नही सका। बेईमानी और भ्रष्टाचार की परिभाषा अब जीवन की सुविधानुसार बदलकर एक सामान्य प्रक्रिया बन गयी है।

4.2.5 आर्थिक शोषण की समस्या -

डॉ. शंकर शेष जी ने सामान्य व्यक्ति, मजदूर आदि समाज में निम्नस्तरीय जीवन जीनेवालों का होनेवाला क्रूर आर्थिक शोषण का चित्रण अत्यंत सशक्त रुप से किया है।

'पोस्टर ' नाटक में पटेल मजदूरों के अज्ञान का फ़ायदा लेकर उन्हे खुलेआम लूटता है। सारे अनपढ़ मजदूर केवल एक रुपया पर जंगल से हर्रा, बहेड़ा, आँवला, गोंद, चिरौंजी आदि इकट्ठा करने का काम करते हैं। गोदाम में जाकर फिर उसकी छटाई सफाई का काम करते हैं। पटेल यह तैयार माल शहर भेजकर लाखों का मुनाफा अकेले ही हडप लेता है। इतनी अच्छि खाँसी कमाई करने के बाद भी सदा अतृप्त रहता हुआ कहता है - " असली कमाई तो की हमारे बाप-दादों ने ..... उस समय एक दोना नमक के बदले ये आदिवासी एक दोना चिरौंजी देते थे।" [16] समुचित परिश्रमिक न मिलने के कारण मजदूर वर्ग असंतोष के भवंडर के बीच ज़िंदगी गुजारने के लिए विवश हैं। बाप-दादों के जमाने में होनेवाला शोषण आज भी जारी है सिर्फ़ पध्दति बदल गयी है। पटेल आदिवासी मजदूरों के उपर कुल पांच रुपया खर्च करके चिरौंजी पाता है और कलकत्ता में चालीस रुपया किलो बेचता है। मुंबई के बाजार में 15 रुपये किलो बेचा

जाने वाला गोंद सिर्फ़ दो रुपये की लागत पर पाता है। पोस्टर नाटक द्वारा नाटकाकार दिखाना चाहता है की उत्पादन में श्रम का ही महत्वपूर्ण योगदान है, लेकिन महत्वपूर्ण योगदान देनेवाले श्रमिकों के हाथ खाली ही रह जाते है। अधिकांश लाभ पूँजिपतियोंद्वारा हड़प लिया जाता है। इसका मजदूरोंको पता भी नही होता। वे अमूल्य वस्तूओं को न्यूनतम मोल में बेचते हैं। वस्तुतः ग्रामीण मजदूरों का शोषण करने का चस्का कोई नया नहीं है। सैकडों वर्ष से शोषण मूलक व्यवस्था उसे व्यथित करती आयी है।

'घरौंदा' नाटक का सुदीप केवल कर्जपर भरौसा करता है। खान से पैसे उठाता है। यह मालूम होने के बावजूद कि सूद समेत ब्याज समयपर न देनेपर पचास लोगों के सामने खान छातीपर डण्डे तानेगा, गालियाँ देगा। समझबुझकर भी वह शोषक के मुह में चला जाता है। पैसे लौटाने की उम्मिद खत्म हो जाती है। तब वह हड़बड़ा जाता है। खतरों से आगाह करता हुआ छाया से कहता है कि : तुम्हारी पूरी तनख्वाह ब्याज में निकल जायेगी। यह सिर्फ़ एक आशंका ही नहीं सुदखोरों द्वारा होनेवाले शोषण का वास्तव चित्र है।

4.3 नारी समस्या -

आधुनिक काल में समाज-सुधारको के साथ साथ नाटककारों ने अगर किसी समस्या को सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा गंम्भीर समस्या के रुप में लिया तो वह नारी समस्या है। युगों से प्रताड़ित नारी की विभिन्न समस्याओं को डॉ. शंकर शेष जी ने अपने नाटकों मे स्थान दिया हैं। वस्तुतः समाज की श्रेष्ठता तथा अश्रेष्ठता का निर्णय मुख्यता नारी के स्थितिपर आधारित होता है। अतः नारी समाज की उन्नति और अवनति का द्योतक बन जाती है। आज समाज में आधी आबादी स्त्री जाति की है लेकिन समाज में उनका स्थान अत्यंत न्यून है। सामाजिक, पारिवारीक और धार्मिक बंधनों और नियमों के द्वारा उसे कसकर बांधा गया है। बचपन में मातापिता के अधीन, जवानी में पति के अधीन बुढ़ापे में लडके के अधीन उसे रहना पड़ता है। शिक्षा के कारण परिवर्तन आ गया है। लेकिन देहातों मे जादा परिवर्तन दिखाई नहीं देता।

4.3.1 यौन शोषण -

वर्तमान मानव की अतृप्ति, शोषण की वृत्ति के साथ साथ क्रूरता भरी काम भावनाएँ उभरकर सामने आती हैं। डॉ. शेष जी नें बड़ी सफलतासे उसे चित्रित किया है। 'पोस्टर' नाटक में पटेल

और फॉरेस्ट अफ़िसर के माध्यम सें नाटककार ने शोषक वर्ग की काम लोलूपता दिखाने की कोशिश की हैं। उन शोषकों की दृष्टि में नारी केवल क्रय-विक्रय की वस्तु है। कामतृप्ति का साधन है। इस भावनाओं का प्रकट करता हुआ अफ़िसर पटेल से 'जंगली माल' चखने की बात करता है। इसपर पटेल बताता है - " वैसे मैने अपने लिए एक छाँट रखी थी कहिए तो आपको भोग लगाए देता हूँ..... अरे आप बेफिकर रहें साब। बिलकुल चिरौंजी दाने की तरह पौष्टिक और कच्चे ऑवले की तरह रसदार होगा।" [17] नारी को सिर्फ़ उपभोग की चीज समजने का यह दृष्टिकोन समाज को पतनोन्मुख कर रहा है। अफिसर और पटेल का नारी के प्रति हीन और भोगवादी दृष्टिकोण अत्यंत निम्नस्तरीय रहाहै। नारी को जीवित, मन-भावना से परिपूर्ण न मानकर उपभोग की बिकाऊ चीज समझकर उसका शोषण पुँजीवादी वर्ग करता हुआ दिखाई देता है।

4.3.1.1 आदिवासी नारी -

पटेल आदिवासी प्रदेश का सर्वोसर्वा है। वह आदिवासी नारियों के प्रति पाशवी व्यवहार करता है। आादिवासी युवतियों से वह अपनी वासनापूर्ति करता है। अफ़सरों को अपनी मुठ्ठी मे रखने के लिए उनके सामने उन्हे फेंक देता है। नाटक में पटेल का निम्न कथन इस संदर्भ मे दृष्टव्य है' - " उसको भी तो पालतू बनने में थोडी देर लगेगी।" [18] जाहिर है कि जो समाज के कानून के रक्षक है वे ही आज भक्षक बन गए हैं। जो अफ़सर आदिवासी प्रांत के विकास, रक्षा, और सुधार के लिए नियुक्त किए जा चुका है। वे ही असल में गुनहगार है। अर्थप्राप्ति, सुख -चैन, वासनांधता मे अपना असली कर्तव्य को भूल गए हैं। आदिवासी प्रदेश की निरिह नारी जो अज्ञानी है, अबला है वह उनकी शिकार बन जाती है। चाहे वह चैती हो अथवा सुखलाल की पत्नी दोनों के जीवन में घटीत घटना अलग-अलग है लेकिन दोनों की समस्या एक ही है। आदिवासी प्रदेश में आज भी इस प्रकार के अत्याचार खुलेआम प्रशासन कानून व्यवस्था के संरक्षक लोगों की सहायता से खुले आम होते है। सुविधाभोगी पुलिस पुँजिवादी व्यवस्था के पैर चाट रही है। वहाँ अकेली नि:सहाय नारी आह भरने के सिवाय कुछ नही कर सकती है। पुरुष की भोग्य बनाकर उसके स्वतंत्र अस्तित्व को आज मिटाया जाता है। कुचला जाता है। अफिसरद्वारा "जंगली माल, तमन्ना के फूल, चीज, माल बढिया और ताजा," [19] आदि शब्दप्रयोग द्वारा नारी को संबोधित करना उसके दु:ष्यरित्र के साथ-साथ नारी के प्रति उसके हीन दृष्टिकोण उजागर करता है। अफिसर शादीशुदा होनेपर भी अपनी काम तृप्ति के लिए गरीब, बेसहारा, औरतों का यौन शोषण करता है वोई-वोई चीज रोज मिले आप बोर

नहीं हो जाते क्या ? कह कर अपनी सफाई देता है। उस पर पटेल अपनी रंगरलियों के बारे में बताते हुये कहता है - " हो तो जाता हुँ .. मेरा मतलब .... थोडा चेंज .... अब आप समझते तो है" [20] इस अर्थ पूर्ण कथन के माध्यम से शोषक वर्ग का नारी विषयक दृष्टिकोन उद्‌घाटीत करने में नाटककार सफल हुये है।

कल्लू की पत्नी पर पटेल की बुरी नजर है। कल्लू का मार्ग से हटाने के लिए उसको मुकादम बनाकर उसकी ड्युटी जंगल में लगा देता है। चैती की ड्युटी हवेली मे लगा देता है। इस घटना के पीछे छिपे राज से कल्लू को आगाह करते हुए गुरुजी कहते हैं कि एक दिन सुखलाल को भी पटेल ने मुकादम बनाया था। उसकी घरवाली की ड्युटी भी हवेली में लगायी थी। अब वह पटेल की क्या है। इसको पूरा गाँव जानता है। नारी शोषण यह उस गांव में अब परंपरा का रुप धारण कर चुकी थी। अब कल्लू के मन में विद्रोह की चिनगारी प्रज्वलीत हो उठती है। वह स्वत्व: की रक्षा के लिए पटेल से संघर्ष करना चाहता है। मजदूरी बढ़ाने में सभी का स्वार्थ निहित होने के कारण सभी लोगोंने उस वक्त कल्लू का साथ दिया था। लेकिन चैती को हवेली भेजने की समस्या पर यह तो तेरा घरेलू मामला है हम क्यों पडे इस झंझट में ऐसा कहते हुए मुँह फेर लेते है। अत्याचार सहते सहते उनके मन की सभी भावनाएँ मानो मृतप्राय हो गई हैं। नारी का यौन शोषण को रोजमर्रा की आम बात समझकर सहजभाव से स्वीकार करते हुए कहते है- " फिर चैती अकेली तो हवेली नहीं जा रही है। न जाने कितनी बहू-बेटियों के साथ ऐसा हो चुका हैं। " [21]

कल्लू अपना विरोध प्रकट करने हेतु गुरुजी द्‌वारा एक पोस्टर बनवाकर कारखाने में चिपकाता है। पटेल डरकर इस पोस्टर के पीछे किसका हाथ है और उनका कौन नेता है इसका पता लगाने के लिए कल्लू के कोड़े पिटता है। कल्लू घायल होकर जमीन पर गिरता है। चैती उस वक्त उठकर घृणा से आकर सीधे पटेल पर थूँकती है। इसपर पटेल क्रोधित होकर अपने असली रुप पर उतरकर ललकारता है। " अब तो ये साली हवेली जाएगी -- कुत्तिया न बनाके छोड़ा तो कहना ..... देखता हूँ मुझे कौन रोकता है," [22] तब कल्लू पटेल से प्रतिकार करता है। बाकी के मजदूर उसका साथ देते है। लेकिन पटेल का चमचा पुलिस को बुलवाता है। अंत में कल्लू को सजा होती है। और चैती को जबरन पटेल की हवेली में पहूचाया जाता है। शोषक वर्ग की अतृप्त काम पिपासा मजदूर नारी का पारिवारिक जीवन किस प्रकार क्षत-विक्षत कर देती है। नारी के यौन शोषण की यह राक्षसी प्रवृत्ति मन झंझोड कर रख देती है।

4.3.1.2 देहाती नारी -

'पोस्टर' नाटक के मुख्य कथा के साथ-साथ नाटक के प्रारंभ में नारी के यौन शोषण का अलग संदर्भ आता है। नाटक के प्रारंभ में कीर्तनकार अपना कीर्तन आरंभ कर देते है। तब एक श्रोता खड़ा होकर व्यवधान डालता हुआ कहता है कि यह सब बंद कर दो यह जगह पाप से सनी हुई है। मंदिर के पिछवाडे में घनी झाडी हैं।वहाँ एक धनिक आदमी नें साल भर पहले एक गरीब लडकीपर बलात्कार किया है। वह बलात्कारी खुले आम इस कीर्तने के कार्यक्रम मे उपस्थित है। बलात्कारी का नाम वह ड़र के वजह से बताने से इन्कार कर देता है। बलात्कार की घटना का वर्णन करते हुए वह कहता है। वह चीख रही थी चिल्ला रही थी लेकिन कोई भी उसे बचाने के लिए आगे नहीं आया।

4.3.1.3 मध्यवर्गीय नारी-

'एक और द्रोणाचार्य'महानगरीय परिवेश में चित्रित हुआ है। पढ़े लिखे आदमियों में भी यह नारी के यौन शोषण करने की पाशवीवृत्ति पनप रही है। यह दिखाने की कोशिश की है। कॉलेज की एक छात्रा अनुराधा एक दिन कॉलेज के बगीचे में अपने प्रेमी की प्रतीक्षा कर रही थी। उस वक्त प्रेसिडेन्ट का पुत्र राजकुमार उसे खिंचता हुआ झाड़ी मे ले जाकर बलात्कार की कोशिश करता है। संयोगवश प्रिन्सिपल अरविंद बगीचे में गुलाब की नयी कलमों को देखने पहुँचा था। उसे अनुराधा की भयानक चीख सुनाई पडी अरविंद द्वारा ललकारने पर राजकुमार भाग जाता है। अनुराधा राजकुमार के विरुध्द रिपोर्ट लिखना चाहती है तब राजकुमार के गुंडे उस पर बलात्कार करने की धमकी देते है। जब अनुराधा अरविंद के पास मदत के लिए जाती है तब वह उसके पक्षधर होता है। लेकिन प्रिन्सीपल अरविंद को प्रेसिडेन्ट फोन पर धमकी देता है कि गबन के आरोप में उसे जेल हो सकती है। तब अरविंद घबड़ाकर तुरंत अपना रुख बदलता है। अनुराधा को उसी के मॉ-बाप का वास्ता देकर बलात्कार - चेष्टावाली रिपोर्ट दबा देने के लिए संकेतपूर्वक समझाने लगता है। अनुराधा के माता-पिता भी अपना विरोध प्रेसिडेन्ट के पास पाँच हजार रुपयों में बेचकर पुत्री को रातोरात दूसरे गाँव भेजने की योजना बनाते है। परिणाम स्वरुप निराशग्रस्त अनुराधा हारकर ट्रक के निचे आकर आत्महत्या कर लेती है। इस हादसे के लिए प्रेसिडेन्ट और राजकुमार जिम्मेदार है उतनेही जिम्मेदार अरविंद और अनुराधा के माता-पिता है।

4.3.1.4 राजवंशीय नारी-

एक और द्रोणाचार्य में महाभारत की मिथक कथा भी मुख्य कथा के साथ-साथ चलती है। महाभारत में घटीत नारी शोषण की प्रमुख घटना का विवरण संवादों के माध्यम से देने का प्रयत्न नाटककार ने किया है। भरी सभा में दुर्योधन के आदेश पर दु:शासन द्वारा द्रौपदी का चीरहरण हुआ। सभी महारथी वहीं बैठकर तमाशा देखते रहें मगर कुछ न बोले। द्रोणाचार्य आचार्य थे। उनका अधिकार था लेकिन वह चुप्पी साधे बैठे रहे। द्रौपदी के अपमान का संदर्भ देते हुये नाटककार ने राजघराने की स्त्रियों के पीछे सत्ता की ताकत होने पर भी उनका भी शोषण इस समाज में हो चुका है। यह बात बड़ी बखुबी से दर्शाते हैं।

4.3.1.5 महानगरीय नौकर पेशा नारी-

अरविंद का सहयोगी अध्यापक विमलेंदू की मौत के बाद उसकी जवान पत्नी बेबस और बेसहारा बन जाती है। एक जगह काम करने के लिए जाती है। वहाँ एक साठ साल की उम्र का नया अफ़सर आता है और प्रमोशन का लालच दिखाकर उसपर डोरे डालने लगता है। हररोज के इस शोषण से छुटकारा पाने के लिए - "शहर छोडकर चली गई है उस बुढ़े अफ़सर से बचने के लिए उसकी भूखी नजर से बचने के लिए, उसकी टपकती लार से बचने के लिए" [23] विमलेंदू की आत्मा की यह व्यथा स्थिति का उद्घाटन करने में पूर्ण समर्थ है।

महिलाओं के लिए नौकरी पानी हो तो उसकी शक्ल-सुरत जादा मायना रखती है। काम करने की क्षमता से जादा सुंदरता और शरीर का इस्तेमाल करना पडता है। इस बात की ओर पोस्टर के बड़े बाबू अपरोक्ष संकेत करते हैं। साली को नौकरी न मिलने की वजह पत्नी से बताते हुए वे कहते हैं –

" अकेले रिश्तेदारी से कुछ नहीं होता। सुरत शक्ल भी होनी चाहीए।" [24]

4.3.1.6 'प्रेम' का मुखौटा -

छाया के साथ सुदीप प्रेम करता है लेकिन उस प्रेम के आवरण के अंदर शोषण करता है। मकान की लढ़ाई में दोनो पैसे इकट्ठा करते हैं। जादा श्रम छाया को ही करने पडतें हैं। परंतु लोगोंकी सहानुभूती का पात्र सुदीप बन जाता है। इस बात का पर्दाफ़ाश करते हुये छाया मिश्रा से कहती है - " आप भूलते है कि उस लड़ाई की सेनापति मैं थी अगर आप हिसाब ही चाहते है तो सुनिए। जितने रुपये जमा

किए और खोये उसमें तीन-चौथाई मेरे थे। वह तो केवल कर्ज पर भरोसा करता था। वह जानता था कि कर्ज भी मैं ही पटाऊंगी।'' [25] इस प्रकार पुरुष वर्ग द्वारा नारी का अलग तरीके से प्रेम के आवरण में किया शोषण-'इस्तेमाल' तंत्र को बढ़ावा देता है। एक ओर छाया की अमृतमयी ममता, प्रेम तो दूसरी ओर सुदीप के स्वार्थ की पराकाष्ठा है। जो विषवत रुप में दिखती है। जिस देश में नारी के लिए युगों से सतीत्व तथा पतिव्रत्य धर्म सर्वोच्य रहें। नारी की आदिशक्ति के रुप में पुजा होती रही, उस नारी का शोषण आज समाज खुले आम कर रहा है। पुरुष निर्बल नारी को सदैव तिरस्कार, घृणा और वासना की भिक्षा देकर उसे केवल उपभोग की चीज समझता रहा है।

मोदी ज़िंदगी की अंतीम घड़ियाँ गिन रहा है। परंतु वह अपनी बेटी की उम्र की छाया के साथ शादी की इच्छा रखता है। शोषण के लिए परिवार की आर्थिक स्थिति का भी अपरोक्ष सहयोग रहता है इस बात को उजागर करता हुआ सुदीप अपना तर्क प्रस्तुत करता है -'' अगर किसी लखपति की जवान लडकी उसकी औरत जैसी ही दिखाई देती तो क्या वह इस प्रकार का प्रस्ताव रखने की हिम्मत कर सकता था ? तुम्हारे सामने उसने प्रस्ताव इसलिए रखा क्योंकि तुम गरीब हो'' [26]

4.3.2 दहेज समस्या -

दहेज एक सामाजिक प्रथा बन गई है। आधुनिक काल का समाज भी इससे अछूता नहीं रहा है। आज भी दहेज प्रथा समाज मे व्याप्त है इस बात की ओर 'घरौंदा' नाटक के द्वारा नाटककारने ध्यान दिलाया है। बेटी की शादी में दहेज देने के हेतू पैसा जुटाने के लिए एक मकान का मालीक अपना घर कम कीमत पर सुदीप को बेचने के लिए तैयार होता है। सुदीप पहली किश्त की तौर पर आठ हजार नगद देता है। बाद में हालात बदल जाते हैं। सुदीप और छाया का मकान लेने का विचार पैसों के अभाव में छोड़ना पडता है। जब वह पैसे वापस माँगने के लिए मकान मालिक के पास जाता है लेकिन खाली हाथ वापस आना पडता है। इसकी वजह छाया से बताता है। उस मकान मालिक ने रुपये उठाकर लडकी के दहेज में दे दिए।

चाहे नारी शिक्षित हो या अनपढ़ वह आधुनिक हो या आदिवासी उसकी समस्याएँ घुम-फिरकर एक ही बिंदू पर आकर थम जाती है पुरुषवर्ग की एकाधिकार सत्ता जिसकी दबावनीति में नारी का शोषण किया जाता है। नारी की तरफ सिर्फ़ भोगवादी दृष्टि रखकर देखा जाता है। उसे इस्तेमाल की,

विक्री की चीज समझकर खुले आम शोषण किया जाता है। जनतंत्र में आधुनिक युग में भी नारीत्व पर खुले आम अत्याचार और शोषण की पाशवीयता प्रवृत्ति को डॉ. शेष ने बड़ी सूक्ष्मता से आलोच्य नाटकोंमे चित्रित किया है।

4.4 वर्तमान शिक्षा-पद्धति : समस्या -

प्राचीन काल से शिक्षा को पवित्रता और आदर्श की बुनियाद मानी जाती थी। समाज उसकी ओर बड़ी अपेक्षाएँ लेकर देखता था। आज की शिक्षा-पध्दति अत्यंत प्रदूषित हो चुकी है। पदभ्रष्टता, भाई-भतीजावाद, स्वार्थपरता, अवसरवाद, राजनीति के साथ गठजाड, खंड़ीत संबंधों आदि के कारण निरंतर पतन के गर्त में गिरती चली जा रही है। इसी बात को विविध संदर्भों के साथ चारित्रिक विश्लेषण द्वारा नाटककार ने आलोच्य नाटक में प्रस्तुत किया है।

4.4.1 निरक्षरता की समस्या -

'निरक्षरता' यह समाज पर लगा कलंक और वर्तमान शिक्षा-पध्दति की अकार्यक्षमता का प्रतिक है। उसमें व्याप्त तृटिंयों का समाज पर बुरा असर पडता है। निरक्षरता यह समाज की उन्नति में एक बड़ी बाधा है। निरक्षरता के कारण व्यक्ति को पग-पग पर चुनौतियों का सामना करना पडता है। पढ़ाई के अभाव में अपने भविष्य के बारे में आदमी उदासिन रहता है। अपने उपर हो रहा अन्याय और शोषण के बारे मे सजग रह कर प्रतिकार नहीं कर सकता। 'वर्ग संघर्ष' में कमजोर पड जाता है। कम वेतन पर 'खून-पसिना'पानी की तरह बहाना पडता है। इसी अंर्तनिहीत वेदना को प्रकट करता हुआ 'पोस्टर' नाटक में मजदूर कहता है - ''पढ़े-लिखे होते तो यहाँ काहे मरते..... दरोगा नई बन जाते क्या ?'' [27] आलोच्य नाटक में कल्लू का यह कथन ऐसेही व्यक्तियों के जीवन की झाँकी प्रस्तुत करता है। चैत द्वारा शहर से लाया गया पोस्टर मजदूरों में स्वत्व भावना जगाता है किंतु उस पर पोस्टर के अर्थबोध से वह अनपढ़ स्थिति के कारण अपरिचित रह जाते हैं। पढ़ने के लिए उन्हे गुरुजी के पास जाना पडता है।

मनुष्य जबतक ज्ञान प्राप्त करता नहीं तबतक पशुवत जीवन बिताता है। पठन पाठन से मनुष्य को प्रगतीशील बनाया जाता है। व्यक्ति अशिक्षित हो, अज्ञानी ही तो वह अपने सामाजिक व्यवहारों के प्रति अपने अधिकारों के प्रति उदासिन, बेखबर रहता है। मनुष्य अपनी विचारशक्ति स्वतंत्र निर्णयक्षमता

भी खोता है। 'पोस्टर' में मजदूर भी पटेल की खुशी में अपनी खुशी इसी कारण मानते है। आदिवासियों में अशिक्षा का कुहा सा है। पटेल जैसा शोषक वर्ग निरक्षर लोगों के अज्ञान का फ़ायदा उठाते हुए उनपर तरह तरह के जूलुम अन्याय और अत्याचार करते है। पटेल मजदूरों को फटकारता हुआ कहता है - '' वही बनावाता है ये पोस्टर नहीं तो साले तुम भेड़ बकरियों का झुंड़..... एकाएक कहाँ से आ गयी तुम लोगों में इतनी अकल ! साले सब के सब अंगूठा छाप '' [28] आज जादा से जादा देहातों में यह स्थिति देखने को मिलती है। निरक्षरता के कारण अधुनिक जीवन में व्यक्ति का अस्तित्व खतरों से भर गया है।

दूसरी तरफ महानगरों में अंगुठा छाप आदमी अपना जीवन खतरों में डालते ही है। फिर भी उनमें से कुछ लोग पैसों के बलबुतेपर अथवा खुशामंद करके उँचा ओहदा प्राप्त कर लेते हैं। किंतू क्षमताहीन होने के कारण उल्टा-पुल्टा काम करते रहते है। समाज की विकास में रोड़ा अटकाते रहते है। एक और द्रोणाचार्य में शिक्षा-संस्था का कमेंटी मेम्बर यह स्वयं निरक्षर है। फिर भी ज्ञानदान के संस्कार में अपना 'योगदान'? देता है। नाटककार समस्याओं के प्रति इतना गंभीर है कि स्थान-स्थान पर संवाद के माध्यम से अपने उद्देश्य को रेखांकित करता है। 'एक और द्रोणाचार्य' में शिक्षा-क्षेत्र में विसंगती भरे शोषण का पर्दाफ़ाश करते हुए अरविंद कहता है - '' अब किस-किस से डरुँ, लिला ? कॉलेज को दूकान की तरह चलानवाले उस प्रेसिड़ेंट से ? अंगुठा छाप कमेंटी मेम्बर से ?'' [29] ऐसे कमेंटी मेंबरों से हम कौनसी अपेक्षा रख सकते है। इस प्रकार समाज में व्याप्त निरक्षरता को आलोच्य नाटककार ने अपनी आलोच्य नाट्य कृतियों में कम जगहोंपर सही लेकिन सशक्त स्वर दिया है। शिक्षा यह जागृति का प्रभावी साधन है। वहीं अधिकांश समस्याओं का उपाय भी है। उसकी आवश्यकता डॉ. शेष ने 'पोस्टर' नाटक में सुचित की है।

4.4.2 शिक्षा और राजनीति गठजोड : समस्या -

गुरुकुल शिक्षण प्रणाली में यह माना जाता था की शिक्षा और राजनीति समानान्तर चलनी चाहिए, उन्होंने एक दुसरे के अधिकार क्षेत्र में दखलंदाजी नहीं करनी चाहिए। उसके लिए कुन्छ सीमारेखाएँ निश्चित की गई थी। आधुनिक काल में निरंकुश सत्ता के कारण राजनीति ने शिक्षाक्षेत्र का इस्तेमाल अपने स्वार्थ भरे कुकर्मो के लिए करना शुरु कर दिया।

डॉ. शंकर शेष जी का 'एक और द्रोणाचार्य' नाटक शिक्षा-क्षेत्र में व्याप्त समस्याओं पर लिखा गया है। एक मिथक का अवलम्ब ग्रहण कर नाटककार ने आधुनिक शिक्षा में व्याप्त असंगतियों-विसंगतियों का खाका खींचकर जर्जरित होती हुई व्यवस्था पर प्रश्न-चिन्ह लगाए है। आज के युग में राजनीति सर्वोच्य बनी हुई है। आज प्रत्येक राजनीतिक दल युवक चेतना, शक्ति और सत्ता का दुरुपयोग अपने निहित स्वार्थो की पूर्ति के लिए ही करना चाहता है। वह युवक-चेतना को जानबुझकर भ्रष्ट और दिशा भ्रमित बनाने की चेष्टा मे व्यस्त है। इसी कारण चंदू जैसा विद्यार्थी उस अभिमन्यु के समान चारों ओर से अनेक समस्याओं के चक्रव्यूह से घिरा हुआ है। 'युवराज' जैसे युवक छात्रों की समस्त'गुंड़ागर्दी'के पीछे निश्चित रुप से जिम्मेदार राजनीतिक लोग होते हैं। प्रेसिडेन्ट जैसा राजनीतिक नेता '' प्रोफेसरों को अपने बाप का नोकर समझता है और कॉलेज को अपनी जायदाद '' [30] चंदू के यह उद्‌गार शिक्षा क्षेत्र को लगे राजनीतिक ग्रहण को स्पष्ट करते है।

'एक और द्रोणाचार्य' में एक घटना में प्रोफेसर अरविंद प्रेसिडेन्ट पुत्र राजकुमार को परीक्षा में नक़ल करते हुए रंगे हाथों पकड़ता है। वहीं राजकुमार जो कि शहर का सबसे बड़ा 'गुंड़ा' माना जाता है। अरविंद के अनुसार वह छुरा सामने रखकर धाक जमाकर नकल कर रहा था। अरविंद संकेत करता है कि उसने प्रेसिडेन्ट के पुत्र राजकुमार की 'रिपोर्ट' कर दी है। राजकुमार के विरुध्द की गई 'रिपोर्ट' वापस लेने के बारे में मनाने के लिए शहर का बड़ा नेता और शिक्षा संस्था का प्रेसिडेन्ट आता है। अरविंद के सामने वह चातुर्यपूर्वक पहले प्रिन्सिपल की निंदा करता है, फिर साठ वर्ष की अवस्था के कारण उसे 'रिटायर' कर देने और अरविंद को ही उसके स्थान पर प्रिन्सिपल बना देने का संकेत करता है। फिर अपने बेटे राजकुमार की रिपोर्ट वापस लेने के लिए दबाव डालता हुआ कहता है। '' राजकुमार को रखिए एक ओर जरा सोचिए तो इस घटना से मेरी पब्लिक इमेज को कितना धक्का पहुँचेगा। चुनाव का टिकट हाथसे जाता रहेगा।'' [31] बाद में लालची बनकर अरविंद प्रेसिडेन्ट का प्रस्ताव मानता है और स्वयं प्रिन्सिपल बन जाता है।

उसी नाटक में दूसरी एक घटना सामने आ जाती है। अरविंदने जब राजकुमार के खिलाफ़ नक़ल करने संबंधी रिपोर्ट की थी। उसी दिन दूसरा एक छात्र चंदू को भी नक़ल करने के आरोप में पकडा गया है। लेकिन उसके अनुसार सच बात अलग है। उसके सामने पर्चे लिखने के लिए राजकुमार बैठा था। वह छुरा रखकर नक़ल कर रहा था। प्रोफेसर मिश्रा की ड्युटी कमरे में थी। वह देखकर भी अनदेखा कर रहें थे। राजकुमार की सीट से दूर घूम रहे थे। राजकुमार के पास से एक कागज उडकर चंदू

के पास आया। चंदू ने कागज उठा लिया। सोच ही रहा था कि प्रोफेसर मिश्रा को दे लेकिन उन्होंने तेजी से आकर चंदू का हाथ पकड़ लिया। उसके बाद प्रो. मिश्रा उसे धकेलते हुए प्रिन्सिपल के कमरे में ले जाते है। फिर उसके विरुध्द रिपोर्ट बनाकर युनिवर्सिटी को भेज दी गई। उसके खिलाफ़ बिना जांच पड़ताल तुरंत कारवाई की गई इसका कारण ''मेरे पिताजी और प्रेसिडेन्ट का राजनीतिक विरोध है। आनेवाले चुनाव में वे प्रेसिडेन्ट के खिलाफ़ लड़ रहे हैं। मै उस विरोध का बलि बनाया गया हूँ सर'' [32] परंतु प्रेसिडेन्ट पुत्र राजकुमार की 'रिपोर्ट' युनिवर्सिटी को भेजने की अपेक्षा दबाई जाती है। इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रतिद्वंद्वता की राजनीति किसी भी स्तर तक जा सकती है। मुख्य बात है अपने प्रतिद्वंद्वी की छबि को खराब करना। शिक्षा-मूल्यों की कोई चिंता नहीं करता।

चंदू पर अन्याय होने के बाद वह अरविंद से मिलकर आशा व्यक्त करता है कि अरविंद को न्याय का साथ देना होगा। उसके बाद कॉलेज की ईंट से ईंट बजा देने की हड़ताल करने की बात बताकर वह अरविंद बदल गऐ तो न छोड़ने की धमकी देता है। इस संवाद से उस समय के छात्रों में राजनीति कितनी घुलमिल चुकी है इसकी और भी नाटककार संकेत करते है।

4.5 मूल्य विघटन : समस्या -

परिवर्तन यह प्रकृति का नियम है। आज के युग में वैज्ञानिकरण और औद्योगिकरण के कारण सभी क्षेत्रों में परिवर्तन आ गया है। नयी मान्यताएँ स्थपित हो रही है। - '' आधुनिक युग मूल्यों का संक्रमण काल है,इस संक्रान्ति काल में अस्पष्टता या दिशाहीनता की स्थिति स्वाभाविक ही है इस स्थिति में बहुत कुछ टूट रहा है। परम्परागत मूल्य अपने जीवन की अंतिम सांसे ले रहे है '' [33] भौतिक परिवर्तन के साथ-साथ आदमी का परिवेश तथा उसकी प्रतिक्रियाएँ जटिल होती जा रही हैं। आधुनिक युग में जीवन-मूल्यों का संकट गहराता जा रहा है।

4.5.1 आदर्शों की कमी -

आलोच्य नाटकों में नाटककार ने आधुनिक युग की यांत्रिक सभ्यता एवं आस्थाहीन विषमता को चित्रित किया है। आधुनिक संस्कृति ने मनुष्य को उन्नत भौतिक सुविधा संपन्न तो बनाया परन्तु उसकी आत्मा को कुचल डालकर उसे आत्महीन, मूल्यहीन बनाया है। 'स्वार्थ' मानवी जीवन में

महत्वपूर्ण स्थान ले चुका है । उसी के कारण व्यक्ति का संन्तुलन बिगड़ गया है। आज का मानव परम्परागत मूल्यों को दफनाकर मार्गक्रमन कर रहा है। नाटककार ने युग के विविध समस्याओं को लेकर मूल्यों के विघटन को अपनी वस्तू-योजना का मूल आधार बनाया है। आज सबसे महत्वपूर्ण बात 'आदर्शों की कमी' की है। हमारे जीवन की दिखावटी बेमतलब बातों पर चूभता व्यंग कर कटू आलोचना करता हुआ 'पोस्टर' में श्रोता-1 कहता है - " पहले कोई अपना घर तो फूँके, महाराज ! फिर देखिए हम उसके साथ चलते है या नहीं, अफसोस तो यह है कि मतलब के बिना कोई दियासलाई की काड़ी भी नहीं जलाता " [34]

4.5.2 व्यक्तिगत मूल्यींका गिरता स्तर -

'एक और द्रोणाचार्य' में अरविंद यह सच्चाई के मार्ग पर जब जब चलने की कोशिश करता है। तब तब 'स्वार्थ' सें अंधे हो गये उसके सहयोगी और पत्नी उसे पथभ्रष्ट कर देती है। अरविंद का सहयोगी अध्यापक यदू इस में प्रमुख भुमिका निभाता है। जब अरविंद प्रेसिडेन्ट पुत्र राजकुमार को नकल करते वक्त पकडता है। तब रिपोर्ट वापस लेने के लिए मनाते हुये यदू अरविंद से कहता है --" पहले अपनी चमड़ी बचाओ और तब लगाओ हाथ दूसरे को -- मै तो और कागज लाकर दे देता , कहता करो नक़ल इतमीनान से करो। अपने बाप का क्या जाता है। " [35] यदू जैसे अध्यापकोंने शिक्षा क्षेत्र के सभी मूल्यों को कुचलकर नरक बना दिया है।

पत्नी लीला भी यदू के बातों में हां मिलाकर अरविंद पर दबाव डालने की कोशिश करती है। आज सुविधाओं ने आदमी को अंधा बना दिया है। नाटक के प्रथम दृश्य में ही लीला 'सिन्हा' के साहब के पुत्र को अपने द्वारा सिफारिश करने के बाद भी अरविंद द्वारा फेलकर देने पर दु:ख प्रकट करती है कि अब सिन्हा की 'प्रमोशन' का क्या होगा ? वह अपने अफसर को क्या उत्तर देगा। लीला के अनुसार जब सिन्हा के कारण अरविंद को नौकरी, मकान और अस्पताल की सुविधाएँ मिल गयी हैं तब भला उस अफ़सर-पुत्र के दो नंबर बढ़ा देने से भला कौन सा आसमान फट जाता ? इस प्रकार के विचार करने वाली लीला स्वार्थ से पूरी तरह 'विवेकशुन्य' बनी हुई दिखाई देती है।

जब अनुराधा के उपर राजकुमार द्वारा यौन शोषण की कोशिश होती है। उस वक्त स्वयं एक नारी होने के बावजूद भी लीला राजकुमार का साथ देने के लिए अरविंद से कहती है। उसे उसके

मूल्यहिन चरित्र का प्रतिबिंब दिखाता है।

राजकुमार को नक़ल करते वक्त पकडने के बाद मामला दबाने से इन्कार करता हुआ अरविंद यदू से कहता है " दूसरों के लिए यह सवाल छोटा हो सकता है, यदू। पर हमारे लिए तो यह जीवन-मरण का सवाल है। प्रोफेशनल एथिक्स का सवाल है " [36] इसके साथ ही कोई साथ दे या न दे रिपोर्ट वापस नहीं लेने पर डट कर खड़ा रहता है। इन संवादो के कारण अरविंद की आदर्शवादी वैचारिकता 'में संदेह नहीं ' किया जा सकता। किंन्तू दुषित व्यवस्था के चक्रवात ने उसके 'सपनों का ताजमहल' धराशायी कर दिया है। अवसरवादी वृत्ति प्रबल होने के कारण सत्ता के हाथों बिक कर, पदोन्नति पाकर अपने घरों के स्तर को उँचे उठाता है। व्यवस्था का यंत्र-चलित पुर्जा बन शोषण का भागीदार होता है।

4.5.3 नपुंसक बुध्दिवादी -

अध्यापक के रुप में जिन मूल्यों को सवरना चाहिए थे उन्हे ही अरविंदने कुचल डाला विमलेंदू उसे प्रताड़ित करता हुआ पुछता है --- " कुल मिलाकर शिक्षक कें रुप में उसे क्या दिया अर्थ शास्त्र पर भाषण --- सवाल है, तुमने क्या दिया ? क्या ऐसा कुछ दिया तुमने जो उसके जीवन को अर्थ देता " [37] शिक्षक बनकर अपना कर्तव्य अच्छि तरह से निभाया नहीं इस लिए चंदू भी उसे बड़े बड़े निरर्थक शब्द थूकने वाला नपुंसक बुध्दिवादी समझता है। छात्रों के दृष्टि में अरविंद का जो अवमूल्यन होता है। वह अत्यंत शोकजनक है। यही स्थिति केवल आधुनिक जगत में हैं ऐसी बात नहीं पुराने जमाने से कभी-कभी यही होता आया है। 'एक और द्रोणाचार्य' में द्रोणाचार्य अपनी गलती मानता हुआ यही कहता है -- " मेरी दी हुई विद्या सहस्त्रों बलिदान लेगी, क्योंकि मैने केवल शस्त्र चलाने की शिक्षा दी है। मैंने उसके आगे ऐसा कुछ नहीं सिखाया है, जो मनुष्य को मनुष्य बताता है।" [38] मूल्यों की दृष्टि से द्रोणाचार्य का पतन यही नहीं रुकता।

गुरु का कर्तव्य होता है वह शिष्यों को सही राह पर ले जाय। गलती हो रही हो तो उसे सुधारने की कोशिश करें। भरी सभा में दुर्योधन के आदेश पर दुःशासन द्वारा द्रौपदी का चीरहरण हुआ। उस वक्त द्रोणाचार्य चुप्पी के साथ बैठे रहे उस घटना के लिए कृपी द्रोण को भी दोषी मानती है। इस पर द्रोणाचार्य दलील देते हुये कहता है - " राजकीय अन्न की दासता ने मेरा विवेक खरीदा। मेरी न्यायबुध्दि खरीदी। मुझे एकलव्य का अंगुठा कटाना पडा, मुझे कर्ण जैसे होनहार विद्यार्थी को व्यवस्था की आड़

लेकर ठुकराना पड़ा, पक्षपात, क्षुद्रता ने मेरा स्वत्व छीन लिया अश्वत्थामा, उस समझौते ने मुझे कभी सही आदमी नहीं बनने दिया। '' [39]

4.5.3 बदलते मुखौटे -

आज 'स्वार्थ' ने व्यक्ति को इतना अंधा बना दिया है। मानवता, करुणा आदि भावनाओंका लोप होता जा रहा है। अरविंद का एक सहयोगी अध्यापक 'विमलेंदू' ने एक धनी आदमी के बेटे को रंगेहाथ नक़ल करते हुये पकडा था। क्रोधित होकर उस लड़के ने गुंड़े भेजकर बीच चौराहे पर विमलेंदू की जान ले ली। अनेक लोगों ने यह घटना देखी थी, पर एक आदमी भी गवाही देने के लिए नहीं गया। सभी दूम दबाकर घर में बैठे रहे। वही लोग विमलेंदू की अंत्यसंस्कार के वक्त चिता के सामने झुट पर झुट बोलकर 'लेक्चर' दे रहा था। हर आदमी यह बताने की कोशिश कर रहा था कि वह अरविंदू का कितना जिगरजान दोस्त है। हर आदमी दोहरी ज़िंदगी किस प्रकार जी रहा है इसका चित्रण नाटककार ने किया है।

4.5.4 कर्तव्य विन्मुखता -

हर आदमी अपने रोजमर्रा की नौकरी को सिर्फ़ अर्थ प्राप्ति का साधन मानता है। लेकिन उस पद, ओहदे की मूल्यों को मानने के लिए तैयार नहीं। 'एक और द्रोणाचार्य' में 'प्रिन्सिपल' उँचा पद मिलने का कारण प्रेसिडेन्ट की गुलामी करता है लड़ो नही झुको सोचो मत-मानो इस प्रकार का व्यवहार करता है. - '' नौकरी करनी है तो कान बन्द कर लो ! आँखे मूँद लो ! मुँह खुला रखो-बोलने के लिए नहीं रोटी खाने के लिए।'' [40] यह उसके सिध्दांत बन गये है धन की प्यास ने प्रिन्सिपल को यहाँ तक गिरा दिया है कि वह अपने शिक्षक पद के प्रचीन गौरव और आदर्श को तिलांजलि देकर सुविधाभोगी बन गया है। सदा सुख की कामना करता है। किन्तु यह भौतिक सुख उसे कर्तव्य विन्मुख करा देता है इसीलिए वह निंदा के लिए पात्र है।

4.5.6 मूल्यहीन राजनीति -

राजनीतिक क्षेत्र में तो आज मूल्य ही दिखाई ही नहीं देते। राजनीतिक मूल्यों को पैरों तले रोंदकर उन्मुक्त भाव से हर एक जी चाहे वह कार्य कर लेता है। दानवियता से परिपूर्ण राजनीति का दौर आज

शुरु है। इस मार्गवर जो चलता है वहीं आगे जात है ऐसी मान्यताएँ आज बन गई है। इस बात को निर्लज्जता के साथ कबुल करते हुए प्रेसिडेन्ट कहता है- " परमार्थ की राजनीति के दिन लद गए मिस्टर अरविंद " [41] अपराध की सार्वजनिन तौर पर स्वीकृति राजनीति में आत्महत्या कहलाती है। नैतिक और राजनीतिक मूल्यों के अभाव में आज अखंड स्वाधिन भारत खण्ड-खण्ड में बिखर रहा है। सुनिश्चित राजनैतिक उद्देश, लक्ष्य और आदर्श चारित्र के अभाव मे आज हम अवनीतिके गर्त मे पहुँच रहे हैं।

4.5.7 पथभ्रष्ट अखबार -

लोकतंत्र मे समाचार पत्रोंपर भारी सामाजिक जिम्मेदारी होती है। सत्यता को निर्भिकता के साथ छापना पडता है। निष्पक्षता उनका प्रमुख मूल्य होता है लेकिन उस क्षेत्र मे भी आज अपना 'कारोबार' बढ़ाने के लिए उल्टी-सिधी खबरे छापी जाती है। इसके विरुध्द कडा व्यंग करते हुये 'एक और द्रोणाचार्य' में अनुराधा कहती है - " कल अखबारवालों को मालूम हो जाएगा। वे मसालेदार ढंगसे खबर छापेंगे। लोग घिनौने ढंग से उसका मजा लेंगे। जो नहीं हुआ है, वह भी मेरे मत्थे मारा जाएगा। " [42] आज अनेक अखबार पथभ्रष्टता की राहपर चल रहे है। इसके ओर भी नाटककार पाठक का ध्यान आकृष्ट करते हैं।

4.5.8 भोगवादी संस्कृति -

महानगरीय जीवन में बदलते हुए परिप्रेक्ष में सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक मूल्यों के मानदंण्ड बदल रहे है। पाश्चात्य संस्कृति आज पुरी जोर से पनप रही है। पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव स्वरुप आज अनेक युवक युवतियाँ विवाह-पूर्व ही सेक्स संबंधों की जानकारी रखती है। आधुनिक युग में जिधर भी दृष्टि जाती है। विलासित का नग्न रुप हमारे समक्ष उपस्थित हो जाता है। 'घरौंदा' मे सुदीप ऐसे ही विचारों से प्रभावित युवक का प्रतिनिधित्व करता है उसके दृष्टि से - " हमारी समस्या है मध्यवर्गीय नैतिकता का बोझ " [43] है। वह शादी से पहले अपनी काम भावना की तृप्ति के लिए छाया के साथ दस-पंद्रह दिनों मे एकाध बार किसी सस्ते होटल में किसी बगीचे की झाड़ियों मे जाकर शरीर की प्यास बुझाना चाहता है। सुदीप का साथी चोपडा दस पंद्रह दिन मे एक बार एक 'लडकी' को लॉज पर लाता है। बियर मँगाता है। व्हिस्की मँगाता है। दो-तीन घंटो में जितना शरीर-सुख मिल लूटता है। कमरे से उतरकर जब लड़की नीचे जाती है तो कांउटर पर बैठा आदमी बहुत बेहूदे ढंग से मुसकराता है। वह हर लडकी के बालों

और साड़ी की ओर घूरकर देखता है। अर्थ खोजने की कोशिश करता है। ऐसी उपभोगवादी संस्कृति ने भारतीय समाज के नैतिक मूल्यों को हिला दिया है। शील, चारित्र्य की तरफ बढ़ती हुई अनास्था और अरुचि की भावना और उससे जुडी समस्याओं की तरफ नाटककार पाठक का ध्यान आकर्षित करते हैं।

4.5.9 प्रेम भावना का इस्तेमाल -

'अर्थ' की लालसा ने सुदीप को सैतान बना दिया है। उनके दृष्टि से जीवन मूल्यों की कोई किमत नहीं है। अपनी धन की प्यास बुझाने के लिए वह दूसरों की हत्या करने में पीछे नहीं हटता। उनकी दृष्टि से 'प्रेम' आदि भावनाएँ महत्व नहीं रखती पाप और पुण्य की कल्पनाएँ मायने नहीं रखती। 'घरौंदा' में सुदीप जानता है की उसका बॉस चंद दिनों का मेहमान है। इसलिए उसकी संपत्ति पाने के लिए अपनी 'प्रेमीका' छाया को उसके साथ शादी के लिए मजबुर करता है। उसके विचार से - " पाप केवल एक धारणा है, छाया। उसकी कभी कोई स्थायी व्याख्या नहीं है। सामर्थ्य और प्रसंग ही उसके होने - न होने का फैसला कर देते है।" [44] पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव और आर्थिक परिस्थितियों के दबाव मे आकर ऐसा काम करने के लिए छाया को प्रेरित करता है जो समाज की निगाह में अनैतिक है, घृणित है। पति-पत्नी का वैवाहिक जीवन केवल शिक्षा-सौंदर्य- उम्र आदि के बलबुते पर सफल होगा ऐसी बात नहीं है वह प्रेम और विश्वास पर खरा उतरना चाहिए। लेकिन सुदीप छाया को अपनी पति की हत्या करने के लिए उसकाने प्रयत्न करता हुआ कहता है -" भावना को ताक पर रखकर, संस्कारों का बोझ उतारकर और नैतिकता के माथे पर लात मारकर हर काम सावधानी से करना होगा " [45] सुदीप के यह निघृण विचार और योजना उसके आत्मा के पतन का निर्देशक है। वह सिर्फ़ मोदी की हत्या ही नही, 'मूल्यों ' की हत्या करना चाहता है।

4.5.10 अर्थ - लिप्सा -

सुदीप का चरित्र पतन इतना हो जाता है। की बाद में उसका छिपा हुआ और घिनौना रुप सामने आ जाता है। शुरु में सिर्फ़ मोदी की मौत पर बहुत जोर देने वाला और केवल वही बाते करनेवाला सुदीप उसके बाद पैसे माँगता था। कुछ दिनों के बाद में केवल पैसे माँगने लगा। मानो उसकी नजर में

छाया सोने का अंडा देनेवाली मुर्गी बनी हो। नैतिक मूल्यों के अवमूल्यन होने के कारण सुदीप एक पशु बन जाता है। मुफ्त मे मिले पैसों के कारण सुदीप को शराब की आदत लगती है। वह इतनी बढ़ जाती है कि कभी कभी दफ्तर में भी पीकर आता है। नाटककार नशाखोरी की समस्या और पीछे छूपे कारण भी दिखाते हुए दिखाई देते है।

डॉ. शंकर शेष जी ने अपने आलोच्य नाटकों मे मुल्यों के विघटन बिखराव और मुल्यों के टूटने का यथार्थ चित्रण किया है। आदमी आज खुदगर्जी का शिकार होकर यांत्रिक हो रहा है। अपने स्वार्थ, लोलूप वृत्ति के कारण आज मनुष्य चाहे जो बुरा कर्म करने के लिए तैयार रहा है। इसका चित्रण नाटककार ने गहराई मे जाकर किया है।

4.6 वर्ग संघर्ष समस्या -

समाज में अर्थ के दृष्टि से धर्म के दृष्टि से अनेक स्तर, (वर्ग) होते है। व्यक्ति किसी एक वर्ग के विचार, रहनसहन, आदर्श, मान्यताएँ, नियम आदि को अपनाकर ज़िंदगी बिताता है। अपने वर्ग के अनुसार सोचता है, हर वर्ग की अपनी सीमारेषा होती है। उसके अंदर हर व्यक्ति परिस्थितिवश रहता है। ''कार्ल मार्क्स के अनुसार समाज में होनेवाले वर्गसंघर्ष से ही समाज प्रगति की ओर उन्मुख होता है। समाज में प्राय: एक वर्ग ऐसा होता है जिसके हाथों में उत्पादन के साधन होने के कारण, सारी सत्ता केंद्रित होती है। दूसरी ओर ऐसा वर्ग होता है जिनके हाथों में कुछ भी नहीं होता। दोनों वर्गो के स्वार्थों में विरोध होने के कारण एक वर्ग का हित दूसरे वर्ग का अंहित हो जाता है ऐसी स्थिति में टकराव तथा द्वंद्व आरंभ हो जाता है।'' [46] विशेष परिस्थितियों में शोषण और उत्पिड़न सहनशक्ति पार कर जाते है। तब विद्रोह का भाव जागृत होता है। समाज को सभी विसंगतियों से मुक्त करने के लिए जागृति की आवश्यकता है। जागृति हो जानेपर व्यक्ति संघर्ष के लिए सक्रिय हो जाता है। आलोच्य नाटकों के माध्यम से डॉ. शेष शोषित, उपेक्षित जनसाधारण को उनकी कमजोरियों का अहसास कराते है। शोषण करनेवाली शक्तियों के विविध रुपों की पहचान कराते हैं। उसके विरुध्द संगठीत लडाई करने के लिए जनसाधारण को संघर्षशील और जुझारु बनाने की कोशिश करते हैं।

'पोस्टर' नाटक के प्रथम दृश्य में एक श्रोता खड़ा होकर कीर्तन बंद करने के लिए कहता है क्योंकि उस जगह पर सालभर पहले एक गरीब लडकी पर बलात्कार हुआ था। वह बलात्कारी का नाम

बतलाने से इन्कार करता है।उसे डर है की वह अत्याचारी उसकी भी हत्या करेगा और साथ ही साथ उसके जाति के लोगों को भी नुकसान उठाना पडेगा इस संभवना को व्यक्त करता हुआ वर्गसंघर्ष के घिनौना रुप बतलाता है। - - " ये लोग मेरे जाति के लोगों का जीना हराम कर देंगे। मौका आनेपर सब लोग दूम दबाकर भाग जाएगें। उस समय रह जाएगें मेरी जाति के मुठीभर लोग उनपर क्या बितेगी। उसकी आप कल्पना नही कर सकते" [47] इन संवादो के जरिए उस गाँव की स्थिति का अंदेशा हो जाता है।

4.6.1 'अर्थ' का आधार -

'पोस्टर' में मजदूर वर्ग आर्थिक विवशता में पिसता हुआ दिखाई देता है। और इसका फ़ायदा पटेल उठाता है। पुराने शोषकों की नई पीढ़ी का यह प्रतिनिधी कम क्रूर नहीं है। भय और आतंक फैलाने के लिए बड़ा से बड़ा जघन्य कृत्य इनके लिए गौरव की बात होती है। उसके कारण आज मजदूर पटेल के जुल्म और अत्याचार को सहते सहते उब गए है।

एक दिन कल्लू मजदूर की पत्नी चैती मायके से लौटी उसका मायका था एक कस्बे में वहाँ एक बाजार था। वहा से सड़क पर पडा एक कागज हॉसीमजाक मे उठाकर ले आयी। सभी मजदूरोंको दिखाने के बाद वह 'पोस्टर' कारखाने में चिपकाया जाता है।मजदूरों द्वारा अज्ञानवश चिपकाया हुआ 'पोस्टर' पटेल के ड़र का कारण बन जाता है। उस इलाके में नक्सलवादियों की वारदाते हो चुकी है। और उनकाही 'पोस्टर' होने के कारण पटेल यह पोस्टर किसने लगाया यह पुछता है। सब डर के मारे और जो कुछ हो रहा है यह समझ के बाहर हाने से चुप बैठते हैं। तब उनकी चुप्पी यह मौन स्वीकृति समझकर उनकी मजदूरी पच्चीस पैसे बढ़ा देता है। पटेल चला जाने के बाद कल्लू गुरुजी के पास जाकर पोस्टर का अर्थ समझ लेता है।और उनसे उस प्रकार के'और चार पोस्टर'बनवाकर लाता है। इस प्रकार 'पोस्टर' मजदूरों में अधिकार चेतना एवं सजगता की भावना निर्माण करता है।

मजदूरों को पहली बार एहसास हुआ कि पटेल का भी विरोध किया जा सकता है। उसे झुकाया जा सकता है। अगर दूसरे गाँव के लोग हिम्मत दिखा सकते है तो हम क्या नपुंसक है? एक बार 'मौन संघर्ष' का मीठा फल पा लेने के बाद वर्ग संघर्ष की भावना और प्रबल हो उठी।इसलिए एक पोस्टर के पाँच पोस्टर हो गये। कल्लू के मन मे जागृत चिनगारी ने मजदूरों में संघर्ष की ज्वाला प्रज्वलीत कर दी। - " तो मैं कहुँगा कि मैने कागज चिपकाया है। मारेगा तो मैं मार खा लूँगा। जो कुछ होगा, मै झेल लूँगा। तुम

लोग चुप तो बैठ सकते हो। देखें तो क्या होता है। '' [48] पटेल चाहे कितना धमकाये चाहे जितनी गाली दे कोई मुँह नही खोलेगा चाहे कुछ भी हो जाए पीछे हटोगें नही। पुलिस दारोगा सभी के द्वारा अत्याचार की कोशिश करनेपर भी टस से मस नहीं होगें। इस प्रकार की बाते तय करते है। यह खामोशी की भाषा, वास्तव में संघर्ष की कोशिश थी। अधिकारों की प्राप्ति के लिए की गई सत्याग्रह की भाषा थी। एक कागज का 'पोस्टर' मजदूरों में अधिकार चेतना जागृत करता है। अधिकारों की सुरक्षा एवं प्राप्ति के लिए उन्हें मुक संघर्ष की प्रेरणा देता है। जिसमें कुछ हद तक सफल हो जाते है और पटेल डरकर उनकी मजदूरी पचास पैसे तक बढ़ाता है। यह वर्ग संघर्ष में शोषीत वर्ग की पहली प्रेरणादायी सफलता है।

4.6.2 नारी के यौन शोषण का प्रतिकार -

पटेल की नजर कल्लू की पत्नी चैती पर है। उसे पाने के लिए वह उसका पुराना तरीका अपनाता है। कल्लू को मुकादम बनाकर जंगल भेजना चाहता है और चैती की ड्युटी महल में लगाता है। गुरुजी कल्लू को सुखलाल का उदाहरण देकर आगाह करते है। मजदूरी के प्रश्न को लेकर सभी मजदूर एक हो जाते है लेकिन चैती को 'हवेली का बुलाव' आनेपर चुप्पी साधे है। 'चैती' पुन विरोध की चिनगारी प्रज्वलीत करते हुए कहती है कि मै हवेली नहीं जाऊँगी। इस पर सभी मजदूरो का मौन 'स्वार्थी वृत्ति' का परिचय देता है। तो तेरा घरेलू मामला है हम क्यों पड़े इस झंझट में कहते हुए छूटकारा पाना चाहते है। लोगों के समझ में यह नही आ रहा था आज चैती का निजी मामला कल घर घर का मामला होगा। कल्लू और चैती ने महसूस किया कि गाँव वालों की लढ़ाई हमे खुदही लड़नी होगी। संघर्ष करना होगा। कल्लू संघर्ष के लिए डटकर खड़ा होता है। गुरुजी से हमी भरता है कि आप कागज बनाइए, मै चैती को रंडी नहीं बनने दूँगा। मजदूरोंको भविष्य के बारे में आगाह करते हुए कहता है - '' जान रखो --- वह अलग अलग तुम लोगोंपर भी चढ़ बैठेगा।'' [49] पटेल आकर उसके प्रस्ताव कल्लू और चैती द्वारा ठुकराने का कारण उन्हें पुछता है। तब उसकी दृष्टि पोस्टर पर पडती है। उसपर लिखा होता है चैती हवेली नही जायेगी और उसपर मजदूर संघटन का चिन्ह बनाया हुआ होता है। पटेल 'यह पोस्टर किस नक्सलवादी नेताने लगाया है यह पुछते हुए कल्लू पर कोडे बरसाता है।

जब कल्लू घायल होकर गिरता है। कल्लू के मुक संघर्ष की इस प्रकार शुरुवात होती है। उसी वक्त जोश आकर चैती पटेल के मुहपर थूंककर संघर्ष को प्रमुख मोड़पर लाकर खड़ा करती है। पटेल

का क्रोधाग्नि भडक जाता है। वह चैती का हाथ पकडकर सबके सामने हवेली ले जाकर 'रंडी' बनाने का ऐलान करता है। कल्लू का संघर्ष अंतिम मोडपर आता है साथी मजदूरोंका बांध रखा संयम टूट जाता है। सार्वजनिक मामले कई बार निजी होते निजी मामले कई बार सार्वजनिक बन जाते है। 'मजदूर-3' सामने आकर पटेल का हाथ पकड़ लेता है और चैती को छोड़ने के लिए कहता है। सभी मजदूरों की अंतरात्मा जागृत होती है। क्रांति का शंख फुंककर वह पटेल को घेर कर खड़े हो जाते हैं। कल्लू पटेल के हाथों से कोड़ा छिनकर पटेल के कोड़े बरसाकर युगो युगोंसे संचित आदिवासी मजदूरोंकी भडास निकल देता है। कल्लू द्वारा पटेल को कोड़े से पीटवाना और मजदूरों द्वारा उसको साथ देना यह संघर्ष की सफलता है।

इस संघर्ष का अंत क्या हुआ यह प्रश्न अनुत्तरित रह जाते है। आखिर कल्लू का क्या हुआ? आखिर चैती का क्या हुआ? क्या पटेल सचमुच सुधर गया? क्या कानून ने मजदूरों का साथ दिया? इन सवालों की जानकारी कीर्तनकार, युवक के संवादों से पाठकों को मिलती है। हाथ आये दुश्मन को छोड़ने को छोड़ देने का परिणाम मजदूरों को भुगताना पड़ता है। पटेल का चमचा सुखलाल चुपके से पुलिस को बुलाकर लाता है। मजदूरों को पीटा गया, उनके झोपड़ों में आग लगाई गई। कल्लू और उसके साथियों को जमींदार की हत्या करने की कोशिश में दस साल की सजा हुई। चैती का जबरदस्ती हवेली पहुंचाया गया।

कल्लू जीत गया या हार गया यह प्रश्न नहीं है। यदी वह सच्ची अर्थ में हारा होता तो उसका कीर्तन गाया नहीं जाता। आज की हार कल की जीत की बुनियाद है। संघर्ष का फल इससे ही प्राप्त होता है। यही नाटक का मूल उद्देश्य है।

4.6.3 नक्सलवादी आंदोलन -

'पोस्टर' नाटक में बीच-बीच में आदिवासी इलाकों में व्याप्त नक्सलवादी आंदोलन का ज़िक्र-आता है। ''पिछले हप्ते कुछ लोगों ने इसी इलाके में एक पटेल का कत्ल कर दिया'' [50] ''और फिर इलाके में जो वारदाते हो रही है '' [51] ''जानता हूँ, दो पटेलों का कत्ल कर दिया उस बंगाली चेलों नें '' [52] इस तरह विभिन्न प्रसंगो में विविध संदर्भों में उपर लिखे गये अनेक कथन आ चुके हैं। वह कथा को और नाटक में व्याप्त संघर्ष को मदत करते हुए दिखाई देते हैं। इसी संघर्ष के कारण कागज से बना 'पोस्टर' पटेल के मन में डर और मजदूरों के मन मे संघर्ष के लिए विश्वास एक साथ पैदा करता हुआ दिखाई देता है। चैती

द्वारा उसके मायके का 'राघोबा' जैसा संघर्षरत आदमी की जानकारी मिलने से पात्रों के मन में जागृति पैदा होती है। 'राघोबा' जैसे कुछ लोग जो शोषण के खिलाफ़ आवाज उठाकर समाजविघातक शक्तियों से लोहा लेने की कोशिश करते है। उनके संदर्भों को लेकर वर्ग संघर्ष में व्याप्त समस्याओंको नाटककार ने यथार्थ और मूल रुप में चित्रित किया है।

4.6.4 मध्यवर्ग की अकर्मण्यता -

अनपढ़ और अज्ञानी मजदूर 'अज्ञानवश' संघर्ष करने में घबड़ाते है। हार जाते है। गलतियाँ करते है किंतु तो महानगरों मे जो पढ़ेलिखे लोग सभी बातों का ज्ञान होने के बावजूद उनकी सीमित लघू दृष्टि के कारण अकेले रहने के लिए और घुटघुटकर मरने के लिए अपने आपको नसीब के हवाले छोड़ देते है। 'एक और द्रोणाचार्य' में इस बात का नंगा सच बतलाता हुआ यदू अरविंद से कहता है " लेकिन तुम हो मिडिल क्लास के आदमी। हर छोटे सवाल को ग्लोरिफाय करोगे। हाहाकार मचाओगे। तुम्हें पूछता कौन है" [53] और अरविंद का संघर्ष उसके परिवार की सीमाओं तक ही सीमित रहता है। हर प्रश्न में वह बड़े संघर्ष की भूमिका तो लेता है लेकिन बाद में समझौता का रास्ता स्वीकार लेता है।

4.6.5 जातिभेद -

उसी नाटक में एकलव्य गुरुदक्षिणा के तौर पर द्रोणाचार्य उसके दाहिने हाथ का अंगुठा काटकर लेते है और प्रतिभाशाली एकलव्य को समाप्त कर देते है। उसके पीछे छिपे हीन वर्ग संघर्ष की भावना को स्पष्ट करते हुए द्रोण अर्जुन से कहते है - " एकलव्य का अंगुठा बने रहने का अर्थ समझते हो? धनुर्विद्या पर उसका अधिकार हो जाएगा। धीरे-धीरे उसके जाति का अधिकार हो जाएगा, शक्तिशाली होने के बाद ये क्षत्रियों से स्पर्धा करेंगे और परिणाम होगा वर्णाश्रम धर्म पर संकट। उसका अगुंठा छीनकर मैं इन सम्भावनाओं को हमेशा के लिए समाप्त कर दूँगा।" [54] इस अप्रत्यक्ष आक्रमण का परिणाम तुरंत दिखाई देता है। अर्जुन एकलव्य के आँखो में व्याप्त क्षत्रियों के प्रति घृणा के भाव से लज्जित होता है। उच्चवर्णियोंका श्रेष्टत्व चिरंतन रखने हेतू द्रोणाचार्य अपनी एकलव्य के प्रतिभा को कुचल ड़ालते है। उस काल की मान्यताओं की अनुसार द्रोण समझते है कि शुद्रोंको ज्ञान का अधिकार नहीं है। उन्होंने सदा बेबस, लाचार और गुलामी में जीवनयापन करना चाहिए।

एकलव्य की यह शृंखला तोड़ने की कोशिश द्रोण के अहम् भाव को चोट करती है । एकलव्य बिना किसी की सहायता से सर्वश्रेष्ट धनुर्धारी बन गया है। यह देखकर हैरान हो जाते है । उन्हें लगता है ऐसा ही हो जाएगा तो एकलव्य का आदर्श लेकर शुद्र लोगों में और एकलव्य बन जाएगे। उच्चवर्गीयोंका 'जन्म' पर आधार पर टिका हुआ श्रेष्टत्व मिट जाएगा । - ''वह सिध्द करना चाहता था कि वह मेरी सहायता के बिना भी महान धनुर्धर बन सकता है।'' [55] उच्च वर्गियों का श्रेष्टत्व कम होने की इस संभावना को हमेशा हमेशा के लिए खत्म करते हेतु एकलव्य का अंगुठा काटकर द्रोण उसका नहीं उसके 'वर्ग' का भी दमन कर देते है। लेकिन द्रोणाचार्य के जीवन की विडंबना यह है कि जिन उच्चवर्गियों के हितों की रक्षा करने के लिए एकलव्य का अंगुठा काटते है शोषक के रुप में उभरते है उसके पहले वहीं द्रोणाचार्य राज द्रुपद के सामने अपमानीत होते हुए दिखाई देते है। अपमान का बदला लेने की प्रतिज्ञा करते हुए संघर्ष की भूमिका स्वीकार लेते हैं। इन दो उच्च जाति के लोगों मे व्याप्त वर्ग संघर्ष की भावना का चित्रण भी इस नाटक के माध्यम से नाटककार करते हुए दिखाई देते है।

'पोस्टर' नाटक के प्रथम दृश्य में एक श्रोता खड़ा होकर कीर्तन बंद करने के लिए कहता है क्योंकि उस जगह पर सालभर पहले एक गरीब लडकी पर बलात्कार हुआ था। वह बलात्कारी का नाम बतलाने से इन्कार करता है क्योंकिउसे डर है की वह अत्याचारी उसकी भी हत्या करेगा और साथ ही साथ उसके जाति के लोगों को भी नुकसान उठाना पडेगा।इस संभवना को व्यक्त करता हुआ वर्गसंघर्ष के घिनौना रुप बतलाता है। - - '' ये लोग मेरे जाति के लोगों का जीना हराम कर देंगे । मौका आनेपर सब लोग दूम दबाकर भाग जाएगें । उस समय रह जाएगें मेरी जाति के मुठीभर लोग उनपर क्या बितेगी। उसकी आप कल्पना नही कर सकते''[47] इन संवादो के जरिए उस गाँव की स्थिति का अंदेशा हो जाता है।

4.6.6 दिशाहीन साजिश -

'घरौंदा' में सुदीप का मन भी मध्यवर्ग का होनेवाला शोषण देखकर त्रस्त है। शोषक वर्ग का एक प्रतिनिधी 'पूँजीपति' बिल्डर के विरुध्द इर्षा के साथ उसकी क्रोध भावना भी उमड़ पड़ती है। मोदी भी उसी धनिक वर्ग में से होने के कारण उसे भी सुदीप शत्रु मानता है। उस वर्ग के खिलाफ़ वह अपने तरीके से संघर्ष करना चाहता है। छाया के मन में उस वर्ग के प्रति कटूता की भावना निर्माण करने की कोशिश करता है। वह छाया से कहता है।-- '' जिन लोगों ने हमसे हमारा मकान छीना है, वे उसी जाति के है

जिसका मोदी हमारा षडयंत्र दूश्मन को उसके ही घर में उसके ही हथियार से मारना है'' [56] लेकिन इस वर्ग संघर्ष के लिए गलत मार्ग चुनने के कारण वह कहीं का नहीं रहता। इस मार्ग से सफल न होने के कारण उसे अपनी गलतियों का एह..ास होता है। सही मार्ग पर चलता हुआ संघर्ष करने का अपना मनोदय नाटक के अंत में प्रस्तुत करता है कि ''जिन प्रश्नों पर आमने सामने आकर लड़ाई करना जरुरी है, जिनके फैसले सड़को पर किए जाना चाहिए उन्हें व्यक्तिगत साजिशो से नहीं सुलझाया जा सकता।'' [57] यही वर्ग संघर्ष का प्रमुख विचार तत्व के रुप मे उभरकर आता है।

डॉ. शेष जी ने वर्ग संघर्ष के बारे में रखे जानेवाले सभी दृष्टिकोनों को अपने नाटकोंके माध्यम से पाठक समक्ष रखने की कोशिश की है।

4.7 धार्मिक समस्या -

प्राचीन युग से ही धर्म समाज का केंद्र बिंदू रहा है। समाज में धर्म व्यक्ति के उचित अनुचित और अच्छे बुरे कार्यो की निर्धारक शक्ति के रुप में स्वीकृत रहा है। समाजजीवन इस धर्मभावना से अभिन्न रुप से जुड़ा रहा है। धर्म के प्रभाव से जीवन प्रवाहमान होता रहता है। व्यक्ति ही नहीं समाज के मनपटल पर धर्म गहरा प्रभाव छोड़ देता है। लेकिन धर्म की स्थिति तलवार जैसी हो गयी है। जो सही आदमी के हात पहुंचते है। न्याय की पक्षधर होती है और गलत आदमी के हाथ लगते ही वह तलवार अन्याय की पक्षधर होती है। उसी प्रकार कुछ समाजकंटक लोगों के हाथों में धर्म का अधिकार पड़तेही उसका नाजायज़ फ़ायदा उठाया जाता है। धर्म को एक भोग्या बनाकर स्वार्थ पूर्ति के साधन के रुप मे इस्तेमाल किया जाता है। धर्म के ठेकेदार धर्म के नाम पर अनाचार, अत्याचार, शोषण के साथ व्यापारी-वृत्ति का भी प्रादूर्भाव कर देते है।

नीतिवादी और मानवतावादी धर्म स्माज को सच्चाई, इन्सानियत बंधुता, करुणा, प्रेम, दया, का मार्ग दिखलाता है। जीवन के हर मोड पर मार्गदर्शक के रुप में उभरता है। जब व्यक्ति ऐसे धर्म का अनुकरण करता है तो वह अपने साथ समाज को भी उन्नत्ति के शिखरतक पहुंचाता है। इसी कारण बहुत प्राचीन काल से सामान्य जन जीवन पर धर्म का प्रभाव कायम रह है। इसी बात का फायदा उठाकर तथाकथित धर्मगुरुओं ने धर्म के आड़े आर्थिक शोषप और सामाजिक वैमनस्य को बढ़ावा दिया है। इसी लिए - '' मार्क्स ने धर्म और इश्वर को सर्वहारा वर्ग के शोषण का साधन मानते हुए इसे नकार दिया है।

उसकी मान्यता है कि धर्म एक अफीम की तरह है जिसे खाकर जनता नशे में उघती रहती है और अपने जीवन के कटु यथार्थ को भूल जाती है। भाग्यवादी होकर अपने उपर होनेवाले जुल्म, शोषण को बर्दास्त कर लेती है। इसलिए धर्म एक प्रतिगामी तत्व है। सर्वहारा काम करता है। धर्म और संप्रदाय की ओट में पूँजीपति वर्ग बड़े ही आराम से सर्वहारा का शोषण करते है'' [58]

4.7.1 अज्ञान -

'पोस्टर' नाटक के द्वारा शंकर शेष जी ने धार्मिक समस्या को प्रस्तुत करते हुए उसमें अंतर्निहित शोषण पर तीखा प्रहार किया है। गाँव का पटेल धूर्त चालाक है। आदिवासी मजदूरों की धार्मिक कमजोरी नाजायज तरीके से फ़ायदा उठाने की तरकीब सोचता है। लोगों की धर्मभावना के साथ खिलवाड़ करता है। उनका अज्ञान कायम रखने हेतू धर्म का इस्तेमाल करता है। 'अखंडानंद महाराज' के माध्यम से गॅवार अनपढ़ मजदूरों का उपयोग अपनी संपत्ति बढ़ाने के लिए करता है। आदिवासी मजदूर अज्ञानी है, अनपढ़ है, आदिम अवस्था में जी रहे है। इसी कारण उनके मन मस्तिश्क पर धार्मिक पाखंड़ो का असर तुरंत होता है। पाप और पुण्य की कल्पना से वह जकड़े होने के कारण वे पाप से ड़रते है। पुण्यप्राप्ति के लिए वे कौनसा भी नुकसान सहने के लिए तैयार रहते है।

पटेल एक तथाकथित नकली साधु अखंडानंद को बुलाकर लोगों के अज्ञान को बनाए रखने की काशिश करता है। अखंडानंद महाराज का परिचय मजदूरों से कराता हुआ कहता है-'' आप के सामने सभी सिध्दियाँ हाथ जोड़ खड़ी रहती हैं। आप तो खाली हाथ से भभूत निकाल सकते हैं। आप तो निपुत्रीक को पुत्र दे सकते है, यहाँ तक सुना है कि आप कैंन्सर जैसा भयानक रोग ठीक कर सकते है -- अभी कुछ दिन पहले महाराज स्वर्ग और नरक की यात्रा करके लौटे हैं। सो आपने साथ वहाँ की बहुतसी तसवीरें लाए हैं। '' [59] आज कल धर्म का स्वरुप इस तरह विकृत ही गया है। समाज के जादातर लोग भाग्यवाद का सहारा लेकर जीवनयापन करते हैं। एक तरफ आधुनिक तकनीकी ज्ञान के आधारपर हम यश के सर्वोच्य शिखर पर पहुँच रहे हैं। दूसरी तरफ इतने पिछड़े हुए है की अंधविश्वास का दामन छोडने के लिए तैयार नहीं है। अज्ञान और अंधविश्वास फैलाने का काम राजसत्ता, धर्मसत्ता और अर्थसत्ता ने मिलकर किया है। इसी कारण ग्राम चेतना अपनी प्रकृति और परिवेश में अनेक अज्ञानजनित कल्पनाओं को समेटे हुई है। इसका फ़ायदा पटेल और अखंडानंद जैसे समाजकंटक लोग लेते हैं।

4.7.2 धार्मिक शोषण -

परिचय के बाद अखंडानंद महाराज मजदूरों के उपर अपने संस्कृत ज्ञान का आतंक जमाने हेतू गिता के श्लोक, गुरु वंदना श्लोक, गायत्री मंत्र सभी प्रकार के श्लोक एक दुसरे में घुसेडकर असबध्द रीति से जोर-जोर से मंत्र पठन करता है। अज्ञानवश मजदूर प्रभावित हो जाते है। उसके बाद अखंडानंद मजदूरों में यह विश्वास बनाए रखना चाहता है की उन्हें जो ज़िंदगी मिली है वह महज उनके पूर्वजन्म के कर्मोंका फल है। इसलिए मजदूरों की आतंकित करता हुआ कहता है-" तो मालिक का साथ दो --- स्वर्ग का सुख भोगो। मालिक की खिलाफ़त करोगे तो ऐसा दुख पाओगे। और देखो स्वर्ग-नरक की तसवीर"[60] वह मजदूरों डर पैदा करना चाहता है की पूर्वजन्म के फल से हम छूटकारा पा नहीं सकते। इसके साथ वह यह भी विश्वास बनाना चाहता है की आज पटेल ने जो ठाट-बाट पाया है वह उनके पूर्वजनम का फल है। वे पिछले जनम में एक जमींदार के घर में नौकर थे। वहाँ उन्होंने मन लगाकर नौकरी की थी। इस से इस जनम में स्वर्ग सुख पा रहे हैं। इसके साथ दो तसवीरे भी दिखाता है। 'स्वामीभक्ति का फल' नामक तसवीर में स्वर्ग की झलक दिखाई देती है। वहाँ एक व्यक्ति राजसिक वेशभूषा में बैठा है एक सुंदर स्त्री उसे सोमरस का प्याला पिला रही है। उसके साथ वह संगीत और नृत्य का आनंद उठा रहा है। उसके बाद अखंडानंद मालिक से बगावत करने से क्या हालत होती है यह बताने हेतू 'बगावत का फल' नामकी नरक की तसवीर दिखाता है। उस तसवीर में एक नंगा सा घायल और लहूलुहान आदमी जमीन पर पड़ा है, उपर उठने की कोशिश कर रहा है। लेकिन यमदूतो का मास्क लगाए दो व्यक्ति उसे भालों से छेद रहे हैं। यह तसवीर सब मजदूरों को दिखाने के बाद पटेल मजदूरों में कभी भी विद्रोह या संघर्ष का भाव उत्पन्न न हो और सदा के लिए वे भयग्रस्त रहे इसलिए वह तसविरें कारखाने में चिपकाता है।

मजदूर कुछ भय से और कुछ आशा से इन स्वर्ग-नरक के चित्रों को देखते रहते हैं। कुछ के आंखों में डर था और कुछ की ऑखो में अगले जनम में कुछ पाने की लालसा दिखाई देती है। इस प्रकार केवल जादा दक्षिणा पाने की लालसा में अखंडानंद महाराज धार्मिक शोषण के द्वारा आर्थिक शोषण की नींव डालते हैं। नाटककार मजदूरों के ऐसे जीवन की झाँकी प्रस्तुत करता है जिसका जीवन अज्ञान, अशिक्षा, के अंधेरे ने जकड़ा हुआ है। रुढ़ी और परंपरा से हटकर वह कुछ नहीं करना चाहते। यदी कोई किरण दिखाई पड़ी तो तुरंत उसका विरोध करते हैं। अंधेरा समेटकर रहनें में वे अपना कल्याण समझते हैं। उससे बाहर निकलने के लिए इच्छूक नहीं होते। भविष्य में मजदूर गुलामी के भाव में सदा के लिए डूबे रहें

इसलिए पटेल हमेशा नकली साधुओं को लाकर उनके मन में झुटी श्रध्दाएँ, विश्वास और निष्ठाए जमा कर देता है।

4.7.3 धर्मांधता -

जो धर्म मनुष्य को मानव नहीं बनने देता बल्कि उसमें धर्मांधता भरकर राक्षसी वृत्ति पैदा करता है। उसे पशु जैसा बर्ताव करने में सहाय्यक होता है। उसे धर्म नहीं अधर्म कहां जाता है। जातिभेद की यह समस्या भी 'पोस्टर' में आ चुकी है। कीर्तनकार के कीर्तन में एक श्रोता 'बलात्कार' की घटना से तो उन्हें अवगत करना चाहता है। लेकिन अत्याचारी का नाम बतलाने में उसे ड़र लगता है। इस अत्याचारी के बारे में जादा जानकारी देने पर श्रोता को लगता है कि उसके सच बोलने की बड़ी कीमत उसे चुकानी पडेगी। उसका परिणाम उसके जाति के लोगों को भुगतना पडेगा। उनके घर जलाएँ जाने के साथ रोजी-रोटी भी छीन ली जाएगीं। कोई न कोई झुठा इल्जाम लगाकर उसके जातभाईयों को जेल में भी ड़ाल दिया जा सकता हैं। यह ड़र सिर्फ़ ड़र नहीं है समाज के अंतराल में जो विषमता प्रविष्ट हो गई है। जिससे मनुष्य और समाज पतन की राहपर जा रहा है। उसका केवल एक अंश है। लेकिन यह अंश हमें देहातों में व्याप्त धार्मिक संघर्ष और जातिप्रथा के कारण निर्माण होनेवाली विकृतियों के विराट स्वरुप का दर्शन कराता है।

'एक और द्रोणाचार्य' में धार्मिक समस्या नग्न यथार्थ रुप में प्रस्तुत हुई है। एकलव्य निम्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। प्राचीन काल से चलती आ रही परंपराओ और धार्मिक नियमों के पैरोंतले निम्नवर्गिय लोगों को बड़ी बेदर्दी से कुचला गया। ज्ञान धन, राज्य, प्रतिष्ठा सभी से उन्हे वंचित किया गया। एकलव्य एक बार शिष्य बनने की इच्छा लेकर द्रोणाचार्य के पास जाता है। तब द्रोणाचार्य उसकी प्रार्थना ठुकरा देते हैं। उस घटना के दस साल बाद दोनों की मुलाकात जंगल में हो जाती है। तब द्रोणाचार्य अपनी दस साल पुराने अपने निर्णय का समर्थन करते हुए कहते है। -- ''शास्त्रों के अनुसार मेरी विद्या केवल ब्राम्हणों और क्षत्रियों के लिए है - ''इन (योग्यता और प्रतिभा) दोनों से व्यवस्था बड़ी है। '' [61] आदमी के जन्म पर उसका कोई अधिकार नहीं होता। प्रकृति जन्म के पहले अपने माता पिता तय करने की सुविधा नहीं देती। इसी कारण मनुष्य का जन्म एक अनचाही व्यवस्था में होने पर भी वह कुछ नहीं कर पाता। घुटनभरी ज़िंदगी निभानी पडती है। थोड़ा बहुत संघर्ष करने की कोशिश करता है। उसमें भी हारने पर व्यवस्था से समझौता करते हुए विवश होकर जीना पडता है।

एकलव्य जैसे थोडे ही लोग स्वयंभू होते हैं। जो किसी के आधार लिए बिना क्षमता प्राप्त कर लेते है। लेकिन द्रोणाचार्य जैसे लोग फिर भी यह धारणा बनाने में रत रहते है कि - " जो व्यवस्था तोड़ी नहीं जा सकती उसमें विश्वास करके जिया जा सकता है" [62] आज तक इस तरह की मान्यताओं ने न जाने कितने निम्नवर्गीय ज्ञानपिपासु लोगों की इच्छाओं को छिन्न-विछिन्न कर उनका जीना दुष्कर कर दिया गया है। केवल शिक्षा का अधिकार नाकार कर द्रोणाचार्य चुप नहीं बैठते। एकलव्य पर उनका किसी भी तरह का नैतिक अधिकार होता नहीं फिर भी षडयंत्र के तहत अपना अधिकार जताकर उसका अंगुठा गुरुदक्षिणा के तौर पर मांगते है। उनके मन में आशंका रहती है। एकलव्य प्राप्त विद्या का उपयोग अपनी जाति के लोगों को सिखाने के लिए करेंगा। धीरे-धीरे उसके जाति के लोग शक्तिशाली हो जाएँगे । उच्चवर्णिय लोगों का शस्त्र-विद्या पर का अधिकार समाप्त हो जाएगा । इसी स्वार्थ निहित धार्मिक विद्वेश के कारण द्रोणाचार्य एकलव्य के साथ क्रुरता पूर्ण व्यवहार करते हुए उसकी धनुर्विद्या की क्षमता, सामर्थ्य, प्रतिभा के मुल स्त्रोत (अंगुठा) की क्षत-विक्षत करते हैं। योग्यता पर नहीं केवल जन्म के आधार पर टिका श्रेष्टत्व कायम रखने के लिए की गयी कोशिश हजारो सालों से होती आयी है। न जाने सैकडों एकलव्य इसके शिकार हो चुके है। युगो युगों से समाज में व्याप्त धार्मिक समस्या की विभीषिका को नाटककार ने मुखर स्वर दिया है।

4.7.4 अंधश्रध्दा -

'घरौंदा' में अंधश्रध्दा की समस्या आ जाती है। गरीब सुदीप हो अथवा धनवान मोदी हो दोनों भी भविष्यवाणी पर विश्वस रखते है। अपने जीने का दृष्टिकोण बदलते हुए उस चश्में से घटित घटना का मूल्यमापन करते हैं। मोदी कारोबार में खून-पसिना बहाकर शून्य से स्वर्ग बनाकर एक कामयाब बिजनेसमन बन गया है। फिर भी भविष्यवाणियों पर विश्वास रखता है। --- " ज्योतिषियों ने कहा था यह वर्ष आपके लिए बहुत खराब है। " [63] इससे उसके अंधविश्वासी होने का सबुत मिलता है। दूसरे अंक के प्रथम दृश्य में दुसरी एक घटना दिखाई देती है। मोदी और छाया की शादी होकर तीन दिन भी नहीं हुए तब मोदी को फोन से पता चलता है की उसके कारोबार में पाँच लाख रुपयों का फ़ायदा हो गया है। इस पर प्रतिक्रिया देत हुआ छाया से बताता है कि उसके मन में यह कॉन्ट्रेक्ट मिलने के बारे में शंका थी। उसने बहुत ऊँचे रेट माँगे थे फिर भी यह कॉन्ट्रेक्ट मिलने का कारण छाया के पैर उसके घर में गृहलक्ष्मी के रुप में पड

गये। वह यह भी बतलाता है कि पन्द्रह साल पहले उसने नया-नया कारोबार शुरु किया था। पैसों की कमी सताती रहती थी। इसी बीच उसकी शादी हुई। प्रथम पत्नी सरला घर में आयी थी। शादी के ठीक तीसरे दिन इसी तरह का फोन आया। लाखों रुपयों का फायदा हुआ था।

इस बातचीत के माध्यम से नाटककार पाठक के मन में अपरोक्ष रुप से एक आशंका जागृत करना चाहते हैं। यदि शादी के तुरंत बाद मोदी के कारोबार में नुकसान हो जाता तो उसकी किस प्रकार की प्रतिक्रिया होती? क्या वह छाया को न्याय दे पाता? अपनी क्षमता से जादा नसीब को महत्व देने की आदमी की आदत कभी-कभी गलत मार्ग पर भी ले जा सकती है।

दूसरी तरफ दफ्तर में बैठकर मिश्रा के साथ सभी कर्मचारी भविष्य के मोहजाल में उलझे कल्पना लोक की सैर करते रहते हैं। भविष्य को सच बनाने के लिए पसिना बहाने से जादा ज्योतिषशास्त्र का सहारा लेते हैं। 'सुदिप' के प्रमोशन का लाभ सिर्फ़ सात रुपये सत्ताईस पैसे प्रतिमाह मिलता है। मिश्रा द्वारा हाथ देखकर बतलायी गयी भविष्यवाणी पर भरोसा रखकर सुदीप क्रियाहीन बन जाता है। उसका परिश्रम से यश, तरक्की पाने पर से विश्वास उड़ जाता है। तक़दीर के उपर हवाला रखकर वह सिर्फ़ कर्ज लेने पर भरोसा करता है। सोचता है कि नसीब से पैसे मिलने पर वह कर्ज चुका देगा। और उसकी यह सोच उसे कंगाल बना देती है। छाया इसके लिए मिश्रा जी को भी जिम्मेदार मानती हुई उनपर शब्दों से तीखा प्रहार करती हुई कहती है ---"आपकी भविष्यवाणियों ने सुदीप को शॉर्टकट के संकेत दिए आप आए है उसकी वकालत करने पर कभी अपनी भूमिका के बारे में सोचा आपने " [64] अंधविश्वास से तात्पर्य विवेकहीन और असंगत भावनाओं से है। लोग अपनी असफलताओं का जिम्मा अंधविश्वास भरी कल्पनापर सौंप देते है। आज समाज में लोगों के मन से अंधविश्वास की जड़े उखाड़ फेंकना एक कठिन कार्य हो गया है। लेकिन इसे किये बीना समाज का संतुलित विकास संभव नहीं है।

4.7.5 मानवतावादी धर्म-

डॉ. शेष जी ने मानवतावादी धर्म की आवश्यकता प्रतिपादित की है। क्योंकि सच्चा मानवतावादी धर्म कभी अन्याय सहने के संस्कार नहीं देता बल्कि वह अन्याय के खिलाफ़ कडा संघर्ष करते हुए उसे मिटाने की सबल प्रेरणा देता है। नाटक के आरंभ में कीर्तनकार अर्जुन श्रीकृष्ण के संभाषण के द्वारा यह बात स्पष्ट कर देते हैं। एक तरफ देश विकास के नारे लगा रहा है तो दूसरी ओर मात्र धार्मिक अज्ञान तथा

अंधश्रध्दाओं का प्रभाव हमारे देश का कुछ मात्रा में प्राचीनता की ओर खींच रहा है। धर्मसत्ता ने सामान्य पीडित जन के मन में ऐसी झुठी श्रध्दाएँ जमा कर दिए हैं कि वे गुलामी से आज़ाद होने के लिए तय्यार नहीं। अत: विकास में बाधा बनाने वाली ऐसी बातों को समस्या के रुप में नाटककार डॉ. शंकर शेष जी ने प्रकट किया है।

4.8 न्याय-कानून की समस्या -

न्याय व्यवस्था और कानून की स्थापना और संचालन मानवी जीवन में व्याप्त समस्या, दु:ख, कष्ट, दैन्य, अत्याचार, सामाजिक असंतुलन आदि को रोकने के लिए और समाज का स्वास्थ को बनाए रखने के लिए किया जाता है। मनुष्य ने सामाजिक सुखशांति के लिए अपने आप पर जो बंधन लादे है उन्हें कानून कहते हैं। समाज में व्याप्त सभी समस्याओ को सत्य एवं न्याय के धरातल पर सुलझाकर मानवी जीवन कलहमुक्त और सुखी बनाना कानून का उद्देश रहा है।

समाज में अन्याय, अत्याचार, गुनहगारी को पनपने से रोककर उसे विधायक कार्य की ओर उन्मुख करना कानून का प्रधान धर्म होता है। पुलिस का कार्य जनसामान्य का दोस्त हमदर्द बनकर उनकी मदत करना है,समाज में कानून व्यवस्था स्थापित करना है। जन जीवन के जान-माल की रक्षा करना भी पुलिसकर्मियों का मुख्य कर्तव्य होता है। पुलिस जनता की रक्षक होने के कारण शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित करते हुए उसे कायम करना उनका आद्य कर्तव्य होता है। अत: मानवी जीवन के स्वास्थ की देखभाल करने हेतु कानून और न्याय व्यवस्था का निर्माण हुआ।

4.8.1 शोषकों से सहयोग -

'पोस्टर' नाटक में स्थिति निराशाजनक है। पुलिस भ्रष्ट और, रिश्वतखोर हो गयी है। वह अवैध धन्धे को रोकने बजाय उसके पनपने एवं संवर्धन हेतू प्रयत्नशील दिखाई देती है। निर्दोष न्याय के पक्षधरों का वह खून कर रही है ताकि उनका शोषण तंत्र और लालफीताशाही अबाध गति से बेरोक टोक चल सके। पटेल पैसों के बलबुतेपर पुलिस और न्यायव्यवस्था को खरीदता है और उनकी मदत लेकर अत्याचार, अनाचार शोषण करते है। कानून के रक्षक भी भक्षक बनकर पैसों के सामने कुत्तों की तरह दुम हिलाकर खुद का सौदा करते है और जो चाहे 'अमानुष' हो या भयानक पापकृत्य करने को सदा तैयार रहते

है। आम जनता को ड़राकर या झुटे गुनाहों में फसॉकर आतंकित करते हुए संवेदनहीन निर्दय बनकर लुटमार करते है। भ्रष्ट राजनीतिक लोगों के आशिर्वाद और संरक्षण में सहकारिता का यह तंत्र प्रतिदिन आतंक और जुल्म ढ़ाए जाता है। भ्रष्ट राजनेता शोषक पूँजीपति और पुलिस का यह शर्मनाक गठबंधन कल्लू जैसे सामान्य व्यक्ति का किस कदर हृदय द्रावक शोषण करता है इसका यथार्थ चित्रण डॉ. शंकर शेष जी ने अपने आलोच्य नाटको में किया है।

'पोस्टर' में मुल घटना स्थल एक देहात का मंदिर और वहाँ घटीत नाट्यमय घटना, के बारे में श्रोता के साथ कीर्तनकार ने किया हुआ संवाद बाद में कीर्तनकारका कथा निरुपन में घटीत घटनाएँ उनमें बार बार न्याय और कानून व्यवस्था का जिक्र आया हुआ दिखाई देता है। नाटक के प्रथम दृश्य में एक मंदिर में कीर्तनकार कीर्तन करता हुआ दिखाई देता है। एक श्रोता बीच में रुकावट डालता है लेकिन घबराहट के वजह से वह अत्याचारी का नाम नहीं बतलाना चाहता। कीर्तनकार उसके मन पर पडे बोझ को उठाना चाहते हुए प्रजातंत्र का महत्व, वाणी का स्वातंत्र्य, फ्री प्रेस आदी बडी बडी बातें कहते हैं। लेकिन उन्हें रोकता हुया श्रोता समाज में व्याप्त कटु वास्तव का चित्र प्रस्तुत करता हुआ कहता है - " यह सब किताबों मे लिखा है, महाराज। अगर ऐसा ही होता तो लड़की का बाप सब कुछ होने के बाद चुप क्यों रहता "[65] उस लड़की को गरीब घर की बेटी होने के कारण न्याय नहीं मिला अत्याचारी को शिक्षा नहीं मिली। अत्याचारी खुले आम कीर्तन सुनने के लिए आकर बैठ जाता है। यह सिर्फ़ उस गाँव का चित्र श्रोता प्रकट नहीं करता वह तो आज भारत मे आम बात हो गयी है।

4.8.2 जनता में अविश्वास -

लोगों का न्याय, कानून, पुलिस, सरकार आदि पर से भरोसा उठ गया है। उस 'श्रोता १' की तरह आम आदमी अत्याचार होता हुआ देखकर भी मदत नहीं करता। गवाह बनने के लिए कतई तैयार नहीं होता। उसे कानून से जादा अत्याचारी का भय होता है। शोषक, पुलिस और का अभद्र गठबंधन लोगों को नपुंसक बनाके छोड देता है। इसी नग्न सत्य को सबके सामने स्वीकार करता हुआ पटेल मजदूरों को खड़े आम धमकाता हुआ कहता है-" आग लगवा दूँगा पूरे गाँव में एक एक अफ़सर मेरी मुठ्ठी में है--- एक-एक नेता साला मेरी मुठ्ठी में हैं।" [66] और वह सिर्फ़ धमकी ही नहीं देता उसे सच करता हुआ भी दिखाई देता है। वास्तव मे मज़दूर पटेल को नहीं उसके पीछे जो ताकत है उससे जो कभी दरोगा, पटवारी कभी हवालदार तो

की फॉरेस्टगार्ड के रुप में आकर हमेशा उनका माँस नोचती है। पटेल जैसे पूँजीपति साधारण जन को परास्त, नपुंसक और विचार शुन्य बनाने का षडयंत्र हमेशा रचता हुआ दिखाता है। इसी कारण आम आदमी पूरी तरह निष्क्रय बन जाता है। हर एक की एक धारणा हो चुकी है। कुछ नहीं होगा सब कुछ रफा-दफा हो जाएगा। आज तक यही होता आया है। निरंकुश, क्रूर एवं भ्रष्ट शासन तंत्र इन शीर्षकों के गले मिल रहे हैं। उसके बदले पटेल पैसा और आदिवासी बेबस औरतों को यौन शोषण करने के लिए उनके सामने फेंक देता है। और फॉरेस्ट अफ़सर जैसे लोग 'जंगली माल' के लिए कुछ भी करने के लिए सदा तैयार रहते है।

4.8.3 लालफिताशाही -

आदिवासी लोगों के विकास हेतु सरकार ने जो भी योजना बनाई, चलाई, जो भी संस्था स्थापित की उन संस्थाओं का कार्य 'चित्र के अश्व' जैसा हो गया है। जिसका वास्तव में कोई उपयोग नहीं है। आदिवासी लोगों में आरोग्य, शिक्षा आदि सुविधाओं का प्रबंध करने हेतु उनका कल्याण, उन्नति करने के लिए सरकार ने 'ट्रायल वेलफेअर डिपार्टमेंट' खोल दिया है। ऐसे विभागों कार्य कागजों पर सीमित रहता है। विभागों के कर्मचारी लोगों की सात पीढ़ियों का कल्याण पहले किया जाता है। तीस सालों के कार्यकाल की उपलब्धी देखी जाय तो शुन्य के अलावा कुछ नहीं हाथ मे आयेगा। लेकिन बड़े ठाट से विभाग चलाया जाता है। कीर्तनकार इस वास्तव पर व्यंग करता हुआ कहता है। -'' जब तक ट्रायबल के पिछवाडे से लंगोटी नहीं उतर जाती तब तक यह डिपार्टमेंट बेखटके चलेगा'' [67] देश के विकास की नींव रुप भारतीय भूमि के सच्चे सपूतों की यह अवहेलना एक शोचनीय स्थिति उत्पन्न कर देती है।

अनेक प्रकार की विकास योजनाएँ और आशाप्रद घोषणाएँ भी आये दिन होती रहती है लेकिन व्यवहार के स्तर पर उसकी सफलता एक स्वप्न ही रही है। सभी सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार की समस्या सभी उद्देश्यों को विफल कर रही है। राजनीतिक नेता और सरकारी अफ़सर स्वार्थ के मतभेद भुलाकर एकराय हों जाते है और खटमल की तरह खून चूसते रहते हैं। पटेल के कथन से इसीका अंदेशा होता है। - '' चार रुपये दूँगा तो मै क्या खाऊँगा फिर इनकम टैक्स, सेल्स टैक्स, पार्टियों को चंदा, अफसरोंको रिश्वत, अखबारों मे विज्ञापन --- तुम्हारा बाप देगा'' [68] इससे स्पष्ट होता हैकि कानून और राजनीतिक लोगों को पैसों की ताकतपर किस प्रकार नचाया जाता है।

4.8.4 गुंडाराज -

'एक और द्रोणाचार्य' में प्रेसिडेन्ट आनेवाले चुनाव पर नजर जमाते हुए विपक्ष के नेता की छबी खराब करने हेतु उसके बेटे चंदू को नक़ल के झुटे इल्जाम में फँसाता है। अन्याय पर विरोध प्रकट करते हुए न्याय की माँग करनेवाले छात्रोंपर पुलिस द्वारा लाठियाँ भी बरसाता है। अपने पुत्र राजकुमार द्वारा बलात्कार करनी की कोशिश के कारण उत्पन्न हुई गंभीर स्थिति से निपटने एवं मुकदमें से उसे बचाने के लिए सभी पर दबाव डालकर केस को रफ़ा-दफा कर देता है। अनुराधा का मूँह बंद करने के लिए उसपर बलात्कार करवा देने की गुंडो द्वारा दी गई धमकी आज के 'गुंडाराज' को प्रस्तुत कर देती है।

4.8.5 विवशता -

अरविंद के सहयोगी मित्र विमलेन्दू कीं हत्या चौराहेपर सैकडों लागों के सामने गुंड़े लोग करते है।लेकिन पुलिस को एक भी चश्मदिद गवाह नहीं मिलता। हत्यारों को शिक्षा नहीं होती। कानून के प्रति आम आदमी का अविश्वास इससे प्रकट होता है।

मुंबई में आम आदमी मकान पाने के लिए कौनसा भी दिव्य करने के लिए सदा तैयार रहते है। बिल्डर लोगोंने यह कमजोरी जानकर उनके सामने सपनों का ऐसा जाल बुन दिया है। जिसमें गया हुआ आदमी ज़िंदगी से पूरी तरह हारकर ही बाहर आते है। 'घरौंदा' में एक बिल्डर के द्वारा फ़साया जाने पर गुहा को आत्महत्या करनी पडती है। छाया और सुदीप ज़िंदगी से हार जाते हैं। न जाने ऐसे कितने लोग होंगे लेकिन बिल्डर का बाल भी बाका नहीं हो सकता। यह घटना महानगरों में व्याप्त न्याय और कानून की व्यवस्था में जो तृटियाँ है उसे प्रकट करती है।

4.9 क्रूरता भरी महत्वकांक्षा की समस्या -

महत्वकांक्षा मानव को उन्नति के राह पर ले जानेवाला महत्वपूर्ण गुण है लेकिन उसके लिए महत्वकांक्षा का हेतू उदात्त होना चाहिए। जिस महत्वकांक्षा की बुनियाद स्वार्थ और लोभ केंद्रित हो वह महत्वकांक्षा व्यक्ति के ही नहीं समाज के चारित्र्य और उज्वल संभावनाओं का हनन कर देती है। ''जीवन में महत्वाकांक्षी होना बुरी बात नहीं, बुराई तो वहाँ स्वयंमेव पहुँच जाती है जहाँ महत्वाकांक्षा की प्राप्ति के

लिए मानव क्रूर और निर्दयी हो जाता है'' [69] महत्वाकांक्षा यदि नैतिक मूल्यों पर टिकी हो तो जीवन को स्वर्ग में परावर्तित कर देती है।

महत्वाकांक्षा का अहंकार के साथ संबंध तो विनाश का द्वार खोल देता है और अत्याचार, अनीति, अधर्म आदि अनर्थ के लिए सहायता प्रदान कर देता है। महत्वाकांक्षा रखते वक्त वह इर्ष्या से प्रभावित नहीं होनी चाहिए। ईर्ष्या से भरी महत्वाकांक्षा सत्कर्मों को राख बना देती है। महत्वाकांक्षा निभाते वक्त जादा आवेश रखना भी हानिकारक होकर इच्छित कार्य असफल बना देता है। महत्वाकांक्षा के कारण क्रोध, ईर्ष्या, प्रतिशोध आदि भावनाओं का निर्माण होता है। कभी कभी तो अतृप्ति से भरी अति महत्वाकांक्षा मानव के अध:पतन का कारण बन जाती है।

4.9.1 बदले की भावना -

'एक और द्रोणाचार्य' में प्रमुख कथा के साथ चलनेवाली महाभारत कालीन द्रोणाचार्य की मिथक कथा महत्वाकांक्षा से निर्माण होनेवाली समस्या को उजागर कर देती है। 'अर्थ की कमी'से परेशान 'द्रोण'राजा द्रुपद के पास याचक के रुप में जाता है। वहीं दृपद उसे धुतकारता हुआ प्रताड़ीत कर देता है। अपमान का घुट पीता हुआ द्रोण घर लौटता है। यह निरादर भरा उपहास उसके दिल को गहरी चोट पहुँचाता है। परिणाम स्वरुप द्रोणाचार्य के मन में प्रतिशोध की भावना क्रूरता भरी महत्वाकांक्षा का निर्माण कर देती है। जो भविष्य में करोड़ों लोगों के विनाश का कारण बन जाती है। कृपी के सामने दृपद से बदला लेने की महत्वाकांक्षा का इजहार करता हुआ द्रोण कहता है। -'' मै अब ऐसी पीढ़ी तैयार करुँगा जो केवल युध्द की भाषा बोलेगी'' [70] उसी वक्त भिष्म वहाँ आकर राजकुमारों का आचार्यपद ग्रहण करने का प्रस्ताव रखते है।उसे कृपी बिना सोचे तुरंत स्वीकार कर लेती है। वह सोचती है कि राजकुमार जो भावी शासक बननेवाले है उनकी सेना बनाकर दृपद को तहस-नहस किया जा सकता है। द्रोण की महत्वाकांक्षा को और प्रज्वलित करती हुई वह द्रोणाचार्य को सलाह देती है कि दृपद से बदला जरुर लो पर उतावली में नहीं योजना बना कर उसका नाश उसके जाति के लोगों से ही कराओ यही व्यक्तिगत प्रतिशोध की भावना उग्र रुप लेते हुए महायुध्द के लिए सहाय्यक हो जाती है।

4.9.2 अहंकारी वृत्ति -

द्रोणाचार्य का जीवन महत्वाकांक्षाएँ रखना और उसे पूरी करने की कोशिश में बीतता है। एक दिन वे शिष्यों के साथ जंगल में शिकार खेलने के लिए जाते है। उस वक्त एकलव्य की धनुर्विद्या देखकर दंग रह जाते है। एकलव्य ने द्रोण को मन ही मन में गुरु मानकर बिना किसी की सहायता से इतना ज्ञान प्राप्त किया है। उतनी क्षमता द्रोणाचार्य के पास रहकर भी अर्जुन प्राप्त नहीं कर सका है। यह सत्य वह बरदाश्त नहीं कर सकते क्योंकि उसके पहले 'एक दिन' उन्होंने अर्जुन को सबसे बड़ा धनुर्धारी बनाने का आशिर्वाद दिया था। 'स्वयंभू' ज्ञानार्जन करके जब एकलव्य सबसे बड़ा धनुर्धारी ब्रन जाएगा तब उनके द्वारा अर्जुन को दिया हुआ आशिर्वाद झुटा हो जाएंगा। अपना आर्शिवाद सच बनाने की महत्वाकांक्षा उनके विचारों में क्रूरता भर देती है। साजिश करते हुए एकलव्य के दाहीने हाथ का अंगुठा गुरुदक्षिणा के तौर पर माँगते है। अंगुठा लेकर एकलव्य की प्रतिभा, ज्ञान के साथ उसके सुनहरे भविष्य की हत्या कर ड़ालते हैं। अपनी नैतिकता को भूलते हुए अर्जुन के सामने निर्लज्य भाव से अपनी डिंग हाकते हुए कहते है -" मैंने एक दिन बहुत प्रसन्न होकर तुम्हे आशिर्वाद दिया था कि पृथ्वि पर तुमसे बड़ा धनुर्धर नहीं होगा। आज मैं अपना वचन पूरा कर रहां हूँ " [71] द्रोण शिक्षाक होते हुए व्यवहारिक धरातल पर अत्यंत हृदयहीन होकर कर्तव्य को भूल जाते है। उनके कुरुप और विकृतिसे भरें हुए श्याम पक्ष को नाटककार ने उजागर किया है।

द्रोण के चरित्र्य में अनके कमियाँ है लगातार अपनी अपूर्णता को समाप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हुए दिखाई देते है। इसी प्रयत्नशीलता के बीच महत्वाकांक्षा का उदय होता है। हर किमत पर अपनी महत्वाकांक्षा पूरी करने की उनकी ज़िद उन्हें क्रूरता से परिपूर्ण बना देती है। उनकी उच्च आकांक्षा विरता का दभ पाखंड की सीमा तक पहूँच जाता है। बनावटी व्यवहार और गर्व के कारण अपना स्वर बिगाड़ देते है। अपनी महत्वाकांक्षा को पूरी करने के लिए जो क्रूरता भरा आचरण करते है। उससे उनकी आत्मा मर कर वह आत्महीन बनते है। नाटककार ने इस महत्वकांक्षा के इन पहलुओ को प्रभावपूर्ण रितिसे चित्रित किया है।

4.9.3 ' पद और प्रतिष्ठा ' का लालच -

'एक और द्रोणाचार्य' में और एक पात्र प्रेसिडेन्ट की महत्वाकांक्षा राजनीतिक तरक्की पाकर मंत्री बनने की है। उस रास्तेपर उसके बेटे राजकुमार के काले कारनामों के कारण पग-पग पर रुकावटे पैदा

होती हैं। अपनी महत्वाकांक्षा को बनाए रखने के लिए वह अपने बेटे की गलती मानने के लिए कतई तैयार नहीं होता उल्टा वह सफाई में दलिले पेश करता है। मामला रफ़ा-दफा करने की कोशिश में वह गिरता ही जाता है। नक़ल के मामले की रिपोर्ट दबाते के लिए अरविंद पर दबाव डालता हुआ कहता है -'' कल तक रिपोर्ट नहीं बदली तो उसके परिणाम भयंकर होंगे'' [72] साथ ही साथ कॉलेज बंद करने की धमकी देता है। अनुराधा के मामले में भी 'न्याय की माँग करनेवाली' उसकी इज्जत से जादा उसे अपनी महत्वाकांक्षा महत्वपूर्ण लगती है। यही महत्वाकांक्षा उसमें क्रूरता भरकर कुकर्म करने पर मजबुर कर देती है।

4.9.4 स्वार्थ की पराकाष्ठा -

'घरौंदा' में श्रम के बिना संपत्ति पाकर मकान लेने की सुदीप की महत्वकांक्षा उसकी ज़िंदगी उजाड़ देती है। वह अपनी महत्वकांक्षा की पूर्ति के लिए शॉर्टकट का रास्ता चुनता है। सच देखा जाय तो सीधे सरल तरीको से परिश्रम से धन कमाया जा सकता है। महत्वाकांक्षा पूरी की जा सकती है। लेकिन सुदीप इतना निकम्मा है कि वह महत्वाकांक्षा को पूरी करने के लिए साजिशों का सहारा लेता है। छाया से कहता है -'' सब रास्ते खत्म हो गए है और यहीं से वह रास्ता शुरु होता है जीसे बेईमानी का रास्ता कहते है--षडयंत्र का रास्ता'' [73] धनवान मोदी को दिल के दो दौरे आ चुके है और वह जादा दिन नहीं बचेगा, उसके आगे पीछे कोई भी रिश्तेदार नहीं है यह सोचकर गहरी साजिश के तहत वह अपनी प्रेमिका छाया को मोदी के साथ शादी करने के लिए मजबुर कर देता है। शादी के बाद डॉक्टर द्वारा मोदी के अच्छि सेहत के लिए जो सुझाव दिए जाते हैं।उसके बिलकुल उल्टा व्यवहार करने के लिए छाया से कहकर मोदी को मौत के घाट उतारना चाहता है। लेकिन छाया के पतिव्रता धर्म के पालन के कारण सुदीप हार जाता है। छाया की अपने पति की ज़िंदगी बचाने की अच्छि महत्वाकांक्षा सुदीप के क्रूरता से भरी महत्वाकांक्षा को मात देती है।

4.10 व्यवस्था का दमन चक्र : समस्या -

मानवी संस्कृति के प्रगति के साथ-साथ समाज मे परिवर्तन होता गया लेकिन इस परिवर्तन के कारण कभी कभी संस्कृति सभ्यता और समाज के मूल ढ़ाँचे के चोट न पहुंचे इसलिए कुछ लोगों द्वारा नियम बनाए गये। लेकिन बाद में शक्ति संपन्न लोग 'अर्थ' और 'सत्ता' शक्ति का अपने

सुख, स्वार्थ अथवा लालसा के कारण उसका नाजायज़ फ़ायदा उठाने लगे। अपना श्रेष्टत्व और अपने स्तर के अस्तित्व को बनाए रखने की कोशिश करने लगे। यह कोशिश हद से बाहर पहूँच गयी तब आदमी यांत्रिक, भावनाहीन और पशुत्व से परिपूर्ण होता गया। उसी के कारण समाजव्यवस्था में दमनचक्र की समस्या का आरंभ होता गया। राजनीतिक नेता हो, पूँजिपति हो, सरकारी अफ़सर या बिल्डर स्थान अलग अलग, नाम और कार्य अलग तरिके भी अलग अलग लेकिन प्रवृत्तियाँ हमेशा एक ही रही। शोषित वर्ग मन की कमजोरियों के कारण डगमगाकर व्यवस्था के हाथों अपने आप को बेच कर दमनचक्र की ताकत बढाता है।

4.10.1 गुंडागर्दी -

हर ताकतवर आदमी अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए दूसरे आदमियों का व्यवस्था के आडे हाथ दमन कर देता है। 'एक और द्रोणाचार्य ' में एक सीधा साधा सरल अध्यापक विमलेंदू बडे आदमी के बेटे को नकल करते वक्त रंगे हाथों पकड़ लेता है। बदला लेने के लिए वह लड़का गुंडे भिजवाकर बींच चौराहेपर विमलेंदू की हत्या करवाता है। सभी चश्मदिद गवाहों को ड़राया जाता है। परिणाम स्वरुप एकभी आदमी गवाही देने के लिए जाता नहीं सब दूम दबाकर घर में बैठ जाते है। व्यवस्था के दमनचक्र के निचे किस तरह कुचल दिया जाता है। यह हमे 'अवगत' कराने का प्रयत्न नाटककारने किया है।

4.10.2 अर्थ व्यवस्था -

कॉलेज का प्रेसिडेन्ट दमनचक्र चलाकर हर आदमी का रस निचोड़ता हुआ दिखाई देता है। उसकी इस प्रवृत्ति का पर्दाफाश करता हुआ अरविंद प्रेसिडेन्ट से कहता है- " आपकी भाषा क्या धमकी की भाषा नहीं होती ? आप जो कहते हैं क्या वही नियम नहीं होता " [74] इस प्रकार अपनी सत्ता का दूरुपयोग करता हुआ प्रेसिडेन्ट शिक्षा-संस्था से सलग्न हर व्यक्ति का जमकर शोषण करता है। प्रिन्सिपल जैसा अधिकार से लैन्स व्यक्ति भी इससे नहीं छुटता प्रेसिडेन्ट को जल्लाद समजकर उसका विरोध याने मौत को दावत समझता है। प्रेसिडेन्ट द्वारा सुबह से शाम तक जो गालियाँ बरसाती जाती है। उन्हें वह फुलों की तरह स्वीकार कर लेता है। प्रिन्सिपल को अपने काबू में रखने हेतु प्रसिडेन्ट उसके मनोबल को तोडता रहता है। 'स्वाभिमान' की भावना से उसे कोसों दूर रखने के लिए नालायक, निकमा कहकर

अपमान करता रहता है। प्रिन्सिपल भी इस पर 'खुशी जाहिर' करने के लिए विवश रहते है। अपना घर और परिवार की समृध्दि के लिए लाचार होना ज़ायज समझता है। हमेशा सोचता है की घर में अँधेरा रखकर मंदिर में दीया जलाने से कोई फ़ायदा नहीं। इसलिए नौकरी करनी है तो लात भी खानी पडेगी। यह उसका जीवन सिध्दांत बन गया है।

अरविंद 'नक़ल' प्रवृत्ति के खिलाफ संघर्ष करना चाहता है। तब प्रेसिडेन्ट अलग अलग तरीकों द्वारा उसका दमन करना चाहता है। धमकी देता है की राजकुमार के खिलाफ की गई रिपोर्ट नहीं बदली गयी तो कॉलेज बंद कर दिया जायेगा। उसपर और दबाव लाने हेतू यदू और प्रिन्सिपल द्वारा समझाने की कोशिश कर देता है। अंत में अरविंद को प्रिन्सिपल का पद देने का प्रलोभन देता है। अरविंद भी प्रलोभन को स्वीकारता हुआ व्यवस्था के हाथों अपने आप को बेचकर राजकुमार के खिलाफ की गई रिपोर्ट वापस लेता है। और खुद इस दमन चक्र चलाने वाली व्यवस्था का एक हिस्सा बनकर न्याय की माँग करते हुए अन्याय के खिलाफ़ आवाज उठानेवाले छात्रोंपर प्रेसिडेन्ट के कहनेपर पुलिस द्वारा डंडे बरसाता है। चंदू और उसके न्याय के पक्षधर साथियों को कॉलेज से निकाल देता है। इस प्रकार अरविंद दमन व्यवस्था का यंत्र-चलित पुर्जा बन शोषन का भागीदार बनकर अपनी अस्मिता को लाचारी में परावर्तित कर देता है।

अनुराधा पर प्रेसिडेन्ट पुत्र राजकुमार द्वारा बलात्कार करने की कोशिश करने के बाद अनुराधा न्याय पाने के लिए संघर्ष करना चाहती है तो गुंडो द्वारा उसपर बलात्कार करने की धमकी देकर उसका मुह बंद रखने की कोशिश की जाती है। उसके पिता को भी जाने से मारने की धमकी दी जाती है। फिर भी अनुराधा अपनी भूमिका से टस से मस नहीं होती।तब पांच हजार रुपये देकर उसके माता-पिता का मुँह बंद करके उनकी ही सहायता से अनुराधा को दूसरे गाँव भेजने का शडयंत्र रचा जाता है। अरविंद अनुराधा का साथ देने की कोशिश करता है।तब प्रेसिडेन्ट उसे वह पंद्रह हजार रुपयों के गबन करने के झुटे मामले में फ़साने की धमकी देकर ब्लैकमेल करते हुए उसे अनुराधा का साथ छोडने के लिए मजबुर कर देता है। विरोध से तिलमिला उठनेवाली 'व्यवस्था' ने न्याय के पक्षधरों पर दमनचक्र का प्रयोग करके उनका दम घोटकर रख दिया। सभी को लाचार, बेबस बनाकर उसके स्वर में हाँ मिलाने के लिए मजबुर कर दिया। इस वास्तव का परिचय देता हुआ विमलेंदू अरविंद से कहता है - " याद है जब तुमने विरोध की

भाषा अपनायी, सत्ता ने तुम्हारे अस्तित्व पर सीधा हमला किया। कभी प्रलोभन देकर, कभी आतंक जमाकर।'' [75]

4.10.3 धर्म व्यवस्था -

कमजोर का शोषण करना और ताकतवर के सामने झुकना यह दूनियाँ की रित बन गयी है। व्यवस्था के हाथों स्वत्व का समर्पण करने वाले द्रोणाचार्य को अंतर्मुख कराने की कोशिश एकलव्य करता है। उनके तथाकथित सिध्दांतो पर तीखा प्रहार करता हुआ उनकी चेतना को झकझोरने का प्रयत्न करता हुआ एकलव्य तर्क प्रस्तुत करता है - '' क्या आप इस अर्जुन से कभी उसका दाहिना हाथ माँग सकेंगे ? क्या आप भीम से उसकी भुजा माँग सकेंगे ? आप माँगेंगे भी तो नहीं मिलेगी तब आपने मुझसे ही अंगुठा क्यों माँगा ? क्या आप अपने शिष्य की हत्या नहीं कर रहे हैं ?'' [76] युगो युगों से यही होता आया है। जो अज्ञानी है। लाचार है कमजोर, बेबस, अंधश्रध्दालू है उनमें व्याप्त तृटियों का फ़ायदा उठाकर उच्च वर्गियों द्वारा बडी कुशलता और क्रूरता से उन पर दमन चक्र चलाकर उनकी उन्नति पर प्रतिबंध लगाया गया।

4.10.4 सत्ता -

'घरौंदा' के प्रथम दृश्य में छाया को मोदी के ऑफीस में स्टेनो नौकरी मिल जाती है। उस 'पद' पर बड़े बाबू की नजर होती है। वह चाहता था उस जगह पर उसकी साली को चुन लिया जाय। लेकिन छाया को नौकरी मिल जाने के कारण उसका अपेक्षाभंग हो जाता है। वह अपना क्रोध नौकरी के पहले ही दिन छाया पर निकालता है। अपनी सत्ता और ताकत का गलत इस्तेमाल करता हुआ छाया को नौकरी छोड़कर भगा देना चाहता है। पहले ही दिन छाया पर इतना काम का बोझ डाल देता है कि समय के अंदर वह पूरा नहीं कर पाती। जब टाइप किया हुआ कागज वह बडे बाबु को दिखाती है। तब वह गलतियाँ निकाल निकालकर उसे अपमानीत करते है। अपनी नाराजगी व्यक्त करता हुआ सुदीप छायासे कहता है। ''अगर बडे बाबू की साली का अपाइंटमेंट आपकी जगह हो जाता तो पहेले ही दिन उस पर इतना काम लादा दिया जाता क्या ? '' [77] सुदीप की यह शंका जायज दिखाई देती है। बडे बाबू जैसा छोटा आदमी भी व्यवस्था को अपने हाथ में लेकर दमनचक्र चलाता है।

4.10.5 आतंक -

'पोस्टर' में श्रोता बलात्कारी आदमी को रोक नही सका। ताकतवर लोगों के डर से उसके जुबान से आवाज नहीं निकली क्यों की वह जानता था अगर वह कुछ विरोध करता तो उसका रातोरात कत्ल करवा देते और उसकी लाश तालाब में फेक दी जाती इसी भय से वह अत्याचार होता देख चुपचाप बैठा रहा। न जाने कितनें लोग इस तरह शिकार हुये होंगे। शहरों में बडे सफाई के साथ चलनेवाला यह दमनचक्र देहातों और क्रूरता के साथ वास्तव रुप में प्रकट होता है। पोस्टर में पटेल के हाथों अपार दमनकारी ताकत समेटी हुई है। उस गाँव के सभी जायज-नाजायज कार्य उसके इशारों से होते है। अपनी दमनकारी क्षमता के बारे में मजदूरों को कहते हुए वह अपने असलीरुप पर उतर आता है। पूरे गाँव के सामने कहता है - '' इस गॉव में मेरी चलती है, मैं जो कहता हुँ वही कायदा है यहाँ हॉ...हॉ मेरी पेशाब से दीया जलता है यहाँ। बडे-बडे कलेक्टर ए.पी. मेरे घर दारु पीते है 'और साले नेता मुझसे चंदा ले जाते है। पता भी तो लग जाए .... खोद के गडवा दूँगा। हवालात में बंद करा दूंगा साले को।'' [78] असल में पटेल जैसे लोगों के हाथों मे अपरोक्ष रुपसे व्यवस्था की बागडोर होती है। इसीलिए अनाड़ी लोगों के साथ पढ़ेलिखे लोग भी उनसे पंगा नही लेते। पटेल जैसे लोगों का विराध तो दूरकी बात है।उन्हें नाराज कर देने वाली कौनसी भी बात के झंझट से वे दूर रहते है। गुरुजी इसी कारण कल्लू को सुचना देते है वह पटेल को मत बताये की उन्होंने पोस्टर पढ़ा है। नहीं तो पटेल उसका तबादला कर देगा अथवा उसपर कोई इल्जाम लगाकर सस्पेंड़ कर देगा। मजदूरों के मन पर भी पटेल की दमनकारी शक्तियों ने अपना आतंक जमाया है। पटेल को डराने के लिए और पोस्टर लाकर चिपकाने के लिए तैयार नहीं होते। मजदूरों के निम्नलिखीत संवादों से हमे इस की जानकारी मिलती है।

''मजदूर ३ - हमको खोदकर गाड़ देगा।

मजदूर ४ - हम से हमारा काम छीन लेगा।

मजदूर १ - हमें जमीन से बेदखल कर देगा।

मजदूर ३- हमारे झोंपडों में आग लगा देगा।

मजदूर ४- हम को हवालात में बंद कड़ा देगा।'' [79]

4.10.6 विद्रोह -

लेकिन कल्लू की जागरुकता पहले मजदूरों को संघठित करती है और वे सभी अपनी माँग के प्रति एक मूक विद्रोह करते है। यह आर्थिक मांग, लेकर कुछ हदतक वे जीत भी जाते है। लेकिन जब चैती पटेल के यहाँ जाने की बात चलती है तब वह विरोध करती है कल्लू भी साथ देता है। लेकिन बाकी लोग आर्थिक मांग के स्तर पर संगठित होने के बावजूद इस बात को कल्लू की व्यक्तिगत समस्या मानकर पीछे हट जाते हैं। नाटक के अंत में पटेल जब चैती को जबरन उठाकर ले जाना चाहता है। तब चैती विरोध करती है सब साथ देते है। किन्तु पटेल के चमचे ऐन वक्त पुलिस को बुलाकर लाते है। कल्लू और उसके साथियों को बहुत पीटा जाता है। कल्लू के खिलाफ झूटा मुकदमा चलाकर जेलभिजवाया जाता है। चैती को जबरन पटेल की हवेली में पहुंचाया जाता है। 'पोस्टर' में दमनचक्र की समस्या अति नग्न स्वरुप मे समाने आती है।

4.11 मनोवैज्ञानिक समस्या -

मनुष्य कितना भी परिपूर्ण बनने की कोशिश करे उसमे कुछ न कुछ कमियाँ रहती है। इसलिए वह अपूर्ण माना जाता है। मनुष्य लगातार अपनी अपूर्णता को समाप्त करने के लिए प्रयत्न करता रहता है। एक ओर नया ज्ञान और नये विचारों से उत्तेजित मस्तिष्क और दूसरी ओर उत्तेजना को खत्म करनेवाली समस्याओं की जंजीरे इनके बीच की तनातनी में एक अलग अनुभूति होती है। उसकी प्रतिक्रिया अलग अलग प्रकार से उत्सर्जित होती है। परिणामस्वरुप व्यक्ति कृत्रिम, कुण्ठांग्रस्त एवं अशांतिमय जीवन व्यतित करता है। मन ही मन में आत्मप्रतारणा करता हुआ अपने आप को कभी कभी नि:सहाय समझता है। - " मनोवैज्ञानिक समस्या चूँकि व्यक्तिगत - सामाजिक अनेक कारणों की उपज है और उसका साक्षात्कार व्यक्ति-विशेष की ही नियति है " [80] मनोवैज्ञानिक समस्या किसी विशिष्ट जाति धर्म, वर्ग विशेष तक सीमित न होकर हर एक मानव की हो गयी है। मनोबल के अभाव से ही मनोवैज्ञानिक समस्या का उद्भव होता है।

4.11.1 अतृप्ति -

डा. शंकर शेषजी का 'घरोंदा' नाटक मनोवैज्ञानिक समस्या की दृष्टि से अत्यंत सशक्त

नाटक है। सुदीप, छाया, चोपडा, गुहा आदि सभी पात्र मध्यमवर्गिय जीवन में व्याप्त लघुता से आक्रांतित और अंदर से टूटे हुए दृष्टिगोचर होते है। अपनी अतृप्ति और प्यास को बुझाने के हेतु दौडते रहते है। उनकी स्थिति ऐसी हो गयी है कि पंख है लेकिन उड़ने के लिए नहीं सिर्फ जमीन पर दौड़ने के लिए समय कें पठार पर घायल तीतरों की तरह दौड़ना ही उनके नसीब में है। सुदीप यह मानता हुआ चलता है की उसकी असली समस्या मकान नहीं है। असली समस्या मध्यमवर्गीय नैतिकता का बोझ है और गरीबी के रेगिस्थान गें महत्वकांक्षाओं का कगल खिलाने की छाया की ज़िद। अतृप्ति के कारण सुदीप सदा झुलसता रहता है। हर रोज छाया और सुदीप ऑफीस में मिलते रहते है शाम को लौटते समय किसी सस्ते रस्तरॉ में चाय पिकर इधर-उधर देखकर धीरे से डरता हुआ सुदीप छाया का हाथ हाथों मे लेता है। कभी कभी किसी सिनेमा हॉल में अंधेरे में उसे करीब खिंचने की कोशिश करता तब उनकी नसे तनती, खुन माथे पर चढ जाता उनका शरीर 'शरीर' माँगता है। परंतु विवश होकर उन्हें मन पर काबू रखकर एक दूसरे के विरुध्द दिशा में विभक्त होकर अपने अपने घर जाना पडता। इस प्रकार पाँच साल मकान के अभाव में बीत जाते है। लेकिन दोनों शादी नही कर सकते है। वास्तविक स्त्री-पुरुष के व्यक्तिगत जीवन को स्थिरता प्रदान करने वाला विवाह एक तत्व है। " मनुष्य के जीवन मे यौन एक गहन एवं शाश्वत आवश्यकता है। यह एक भुख है, जिसकी तृप्ति प्रेम मे शारीरिक संबंधो के निर्वाह में होती है।" [81] लेकिन ऐसा न होने के कारण दोनो अंदर ही अंदर टूट जाते है। गुहा की मौत से दोनो को बडा सदमा पहुंचता है। गुहा के पत्नी का गॉव से आया पत्र पढ़कर छाया पूरी तरह बिखर जाती है। भविष्य में बच्चों पर अच्छे संस्कार होने चाहिए। इस अपेक्षा से केवल फ्लैट लेने का हट करनेवाली छाया चाल की बात छोडिए झोपडी में भी रहने के लिए तैयार हो जाती है। सुदीप जब उसे होनेवाले बच्चों उपरके संस्कार के बारें में पुछता है तब छाया उसे कहती है - " भाड में गये उनके संस्कार अब तो उनका संस्कारहीन होना ही अच्छा है। हमने क्या पा लिया ? किस काम के रहे हम ? न इधर के न उधर के, सफेद कपडे पहननेके बावजूद उस समाज के नियमोंकों हम स्वीकार नही। मजदूरोंसे कम तनख्वाह पा कर भी मजदूर कहलाने से नाक-भौं सिकोडने वाले हम ... त्रिशंकु की संतान है... त्रिशंकु की संतान है। ..... कुछ भी करो सुदीप गुहा की पत्नी का एक एक शब्द किसी पिघले सिसे की उबलती बूँद की तरह मेरी आत्मा पर पड रहा है। फफोले उठ आए है। मुझे चाहिए केवल एक छाया..... जहाँ निर्भय होकर मैं तुम्हारी बातों में समा सकूँ। जहाँ की हवा मेरी साँस बन सके। केवल एक टूकड़ा फर्श, एक टूकड़ा आकाश," [82] यह केवल छाया की समस्या नहीं,

नाटककार ने किया हुआ महानगरीय मध्यवर्गिय जीवन के यथार्थ का उद्‌घाटन है। निराशग्रस्त, विवश नारी की भावनाओंकी सशक्त अभिव्यक्ति की है। छाया के चारित्रिक विश्लेषण द्‌वारा नाटककार ने मध्य वर्गीय युवती की मानसिकता का यथार्थ परख चित्रण किया है।

4.11.2 आत्मसमर्पन वृत्ति -

छाया के कहने पर सुदीप दौड़भाग करके एक चाल का कमरा तय करता है। उसके आने से पहले छाया का भाई गोविंद आकर छाया से अमरीका पढ़ाई के लिए जाने के लिए पैसों की मदत मांगता है। बातचीत के दौरान विवश होकर छाया मकान के लिये जमा पूँजि उसके हाथ सौंप देती है। अपने मन को समझाने की कोशिश करती है की शायद उसके किस्मत मे दिवार से ही टकराना लिखा है। परंतु फिर भी वह अपने भाई के पंखो में बलप्रदान करना चाहती है। वह प्रगति के द्‌वारा आकाश की उंचाइयों को छू ले इसलिए वह अपने सपनों का महल जला डालती है। अंत: उसके हाथों में रह जाता है। 'एक खाली पासबुक' जो उनकी लढाई का एक मात्र ऐतिहासिक दस्तावेज़ है। अंतरद्वंद्व ग्रस्त इस घटना की परिणति 'यथार्थ'की अपेक्षा'आदर्श'रुप में की है। प्रेमिका छाया के व्यक्तित्व को छाया 'बहना' के व्यक्तित्व नें पराभूत कर दिया और कर्तव्य की बलीवेदी पर भावना का बलिदान हो गया।

4.11.3 कुंण्ठा -

एक दिन शाम के समय पर छाया अकेली बैठकर टाईप कर रही थी। उसी वक्त मोदी आकर उसके पास प्रेमयाचना करता हुआ शादी का प्रस्ताव रखता है। वास्तव में मोदी की उम्र छाया से दुगुनी है। मोदी के मन मे एक अलग प्रकार की मनोवैज्ञानिक गुथ्थीं है। उसे वह छाया के सामने टायपिंग टेस्ट में फेल हो जानेपर भी छाया को काम पर रखने के पीछे जो राज था वह बतलाता है। मोदी की स्वर्गवासी पत्नी की तरह छाया हुब-हू दिखाई दि,उसी तरह बोलती थी चलना भी उसकी तरह का था। इसलिए छाया को नौकरी में रखने से पहले मोदी ने सौ बार सोचा की उसे नौकरी पर रखा जाय या नही। न रखा जाता तो बात आगे न बढ़ती समय के धूल चढती जाती। याद धुंदली पड जाती। फिर भी मोदी उसे नौकरी पर रखता है। उसके मन के किसी कोने में मोह जगा। सोचा रखा जाए कम से कम उसे देखने का सुख तो मिलेगा। मोदी एक दिल का मरीज है। उसे दो दौरे आ चुके है। उसका अगला क्षण अनिश्चीत है।

उसे डॉक्टरने दफ़र आने से भी मना कर दिया है। लेकिन वह हररोज छाया दिखाई पडे इसलिए दफ़र आता है। ज़िंदगी की अंतिम घड़ियों को साथ शादी करके गुजारना चाहता है।

4.11.4 संस्कार -

सुदीप मोदी के इस प्रस्ताव के बारे में सुनता है। तब उसका मन स्वार्थ से लबालब भरा जाता है। मोदी दिल की बीमारी के कारण चंद दिनों का मेहमान है। उसकी मौत के बाद उसकी संपत्ति हथियानें के लिए अपनी प्रेमिका छाया से मोदी के साथ शादी करने के लिए मजबुर कर देता है।

शादी के बाद सुदीप का फ़ासा उल्टा पड जाता है। मोदी के घर में बातो ही बातों मे छाया का हाथ अपने हाथ में जब लेता है तब छाया हाथ तुरंत छुडा लेती है। सुदीप इस प्रतिक्रिया का मूल कारण पुछता है तब अपने मन में उठी इस उलझन को वह भी प्रकट करती हुई कहती है - " पता नहीं क्यों अपने आप हाथ न जाने क्यों हट गया। क्या स्पर्श के भी संस्कार होते है, सुदीप ?" [83] स्थितियों में परिवर्तन आने के कारण मन की भावनाएँ संस्कार भी परावर्तित हो जाते है। सुदीप की प्रेमिका मोदी की पत्नी बन चुकी है। बचपन से होते आये संस्कार और भावनाओं के बीच टकराव की स्थिति उत्पन्न होती है तब संस्कार जीत जाते हैं।भारतीय समाज में विवाह एक संस्कार है, केवल सामाज़िक समझौता मात्र नहीं। नारी पुरातन काल से ही इस संस्कार के प्रति अधिक निष्टावान रही है। वे संस्कार छाया के मन में इस कदर परिवर्तन कर देते है की वह समझ भी न पाती। अभीतक सच्चे अर्थ में छाया मोदी की पत्नी भी नहीं हुई। उसके संस्कार मनसे जादा कर्तव्य की तरफ आकृष्ट कर देते हैं। सुदीप मोदी को मारने का षडयंत्र रचता है किंतू वह यह षडयंत्र सफल नहीं होने देती। जो छाया सुदीप के कहने पर मोदी की संपत्ति प्राप्त करने हेतू शादी करती है। वही छाया मोदी को नयी जीवन संजीवनी देनेवाली जीवनदायिनी साबीत हो जाती है। "वस्तुत: जीवन परिस्थितियों के द्वंद्व में प्रवाहित होता है। मनुष्य के अंदर दो तत्व होते है एक वासनाएँ और इच्छाएँ तथा दूसरा शुभ-अशुभ संबंधी विचार। इच्छाओं को दबाकर आदर्शोंपर टिके रहना व्यक्ति की दृष्टि से बहादूरी है।" [84]

4.11.5 घुटन -

शादी के बाद हर बार नया झुट प्रस्तुत करता हुआ सुदीप छाया से पैसे ऐठता रहता है।

मोदी से पैसे निकालने के लिए छाया से भी झुट बुलवाता है। लेकिन झुट बोलते वक्त छाया मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों की शिकार हो जाती है। एक गरीब बाप की बेटी होने का एहसास उसे लघुता की भावना से भर देता है। - '' मै पैसेवाले की औरत भले हुँ, पर पैसेवाले की लडकी कभी नहीं रही। '' [85] इसी कारण जब वही साड़ी की खरीददारी, 'सामान खरीदना'अथवा किसी को'चंदा या दान देने'का झुठा 'हिसाब मोदी को देती है,तब उसकी आँखें देखकर छाया को लगता है की वह उसकी ओर दयाभरी आखों से देखकर मानो कहता हो कभी इतनी साड़ियाँ न देखी है इसलिए इतकी हाय-हाय। हर झुट बोलते समय वह अपनी ही निगाह में छोटी होती जाती है। मनोविज्ञान से आतंकित भीतर ही भीतर घुटन का अनुभव करती रहती है। छिपाया गया सत्य उसके अंदर पाप-बोध का भाव जागृत करता है।

मोदी के शादी का फ़ैसला करने के बारें में छाया सुदीप से कहती है की यह फ़ैसला केवल उसका नहीं है। सिर्फ़ उसके कहने पर हाँ नहीं मिलायी है। पूर्ण आत्मपरिक्षण करने के उपरांन्त निर्णय लिया है। सुदीप को नाकार कर ही मोदी का स्वीकार किया है। - ''तुम विरोध करते तो मेरे लिए असाधारण आदमी बनकर उभरते। पर नहीं, तुमने ही उल्टे सुझाव दिया ..... षडयंत्र का ..... तुमने एक नपुंसक निर्णय लिया। इसके बाद भी तुम मेरे पुरुष कैसे रह सकते थे ? सच कहूँ, उस दिन घिन हुई मुझे तुमसे ... और इसलिए मुझे उस दिन तुम जैसे हट्टे - कट्टे आदमी की तुलना में यह अपाहिज आदमी ज्यादा ताकतवर लगा '' [86] यदी उस दिन सुदीप कहता की मकान नहीं है तो क्या हुआ खान के कर्ज से भी निबट लेंगे लडते लडते मर जाएँगे लेकिन समझौता नहीं करेंगे तो शायद छाया मोदी से शादी करने का फ़ैसला नहीं करती। इसी कारण सुदीप उसके बौध्दिक निकर्ष पर खरा नही उतर पाता। और छाया निर्लिप्त भाव से अपने कर्तत्व पालन को स्वीकार लेती है। छाया के माध्यम से नाटककार ने शिक्षित आधुनिक नारीकी मनोग्रंथियों का विश्लेषण बडी सफलतापूर्वक किया है।

4.11.6 अस्तित्वभाव -

मोदी के साथ शादी करने के बाद वह अपने झुठेपन के कारण लघुता का एहसास तो करती है लेकिन फिर भी अपना'स्वतंत्र अस्तित्व'बनाए रखने की कोशिश करती रहती है। शादी के बाद हर घटना के पीछे मोदी छाया में अपनी प्रथम पत्नी सरला का प्रतिबिम्ब देखने की कोशिश करता रहता है। सरला के आगमन के बाद कारोबार में मुनाफ़ा हुआ था। अब संयोगवश छाया के आगमन के उपरान्त भी

कारोबार में मुनाफ़ा होता है। यह संयोग की बात को वह बार बार दोहराता है। छाया कमरे में नीले पर्दे लगा देती है प्लॉवरपॉट गुलाब के फुलों से सजा देती है। फर्निचर बदल देती है तब मोदी उसके और सरला के बीच के साम्य को याद करता हुआ दोनों में तुलना करने लगता है। छाया के मन में अपने स्वतंत्र अस्तित्व का मनोभाव उभरता है वह किसी दूसरे (सरला) के प्रतिबिम्ब में अपना अस्तित्व विसर्जित करना नहीं चाहती। तुरंत मोदी को रोकती हुई वह अपनी नाराजगी प्रकट करती हुई कहती है - " मेरी तुलना हर बात में सरला से क्यों करते है आप ? क्या मुझमें कुछ भी अलग नजर नहीं आता ? " [87] साथ साथ इस घटना के माध्यम से मोदी में प्रथम पत्नी के स्वर्गवास के कारण जो दमीत वासनाएँ, इच्छाएँ अतृप्ति होती है। उनकी मनोवैज्ञानिक गुंथ्थी को नाटककार ने सुलझाने की कोशिश भी की है। इसके साथ छाया को अपने 'स्वतंत्र अस्तित्व' का होनेवाला एहसास भी दिखाया है।

4.11.7 संदेह -

नाटक के अंतिम दृश्य में सुदीप को अपनी गलतियों का एहसास हो जाता है। वह छाया को खत भेजकर सभी बाते साफ साफ बता देता है। जिंदगी की परीक्षा में खरी उतरने के लिए छाया की सराहना करता है। लेकिन वह खत मोदी के हाथों पहले पड जाता। खत पढ़ते ही दु:ख के कारण वह अपने आप को संभल नहीं पाता। छाया उसकी हालत देखकर घबरा जाती है बार बार पूछने पर मोदी टेबल पर पडे खत की ओर इशारा करता है। छाया सुदीप द्वारा भेजा गया खत पढने के बाद टेबुलपर रखे वसीयत के लिफ़ाफ़े को उठाती है और उसे फाडकर टूकडे टूकडे कर देती है।कमर से चाबिंयाँ निकालकर सामने रख देती है। अपने घर छोडकर जाने का कारण बतलाती हुई कहती है की उसके नाम आया हुआ पत्र मोदी ने क्यों पढ़ा ? सुदीप का नाम सुनकर उसके मन में संदेह जागृत हुआ इसी कारण उसने व्यथा में डूबो दिया। पत्र फाड़कर फेंक दिया नहीं उल्टा छाया को दिखा देने का मतलब उसके मन में पत्नी छाया के प्रति प्रेम और विश्वास नहीं रहा। अंत में मोदी द्वारा उसे मनाया जाने पर लिपटकर छाया कहती है - " बस यही अधिकार चाहिए मुझे तुम्हारा ..... शरीर पन ..... मन पर ..... प्यार की पराकाष्ठा ..... संपूर्ण स्वीकृति ..... संदेह से परे " [88] भारतीय संस्कृति की सभी धारणाओं को समेटती हुई छाया भारतीय नारी के प्रातिनिधिक रुप में उभरती है। मानवी मन की गहराइयों में डूब कर मध्यमवर्गीय चेतना के मनोवैज्ञानिक पक्ष को अनेकाधिक स्तरों पर उजागर करते हुऐ पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रांकन

करते हुए नाटककार दृष्टिगोचर होता है। छाया के माध्यम से मनोवैज्ञानिक सत्यों की गहरी छानबीन के साथ पहचान कराने में डॉ. शंकर शेष जी को एक निश्चित सफलता प्राप्त हुई है।

4.11.8 विवशता -

नाटककार शंकर शेष जी द्वारा 'एक और द्रोणाचार्य' में आंतरिक संघर्ष अत्यंत सजीवता के साथ अंकित किया है। अपनी कर्तव्यहीनता और अमानुषता के कारण होनेवाला पश्चाताप या ग्लानि एवं नई आत्मा की खोज के लिए होनेवाली द्रोणाचार्य और अरविंद की छटपटाहट और तडपन के साथ व्यवस्था के हाथों समझौता करने की विवशता सभी मनोव्यापारों को मार्मिकता के साथ चित्रित किया है।

द्रौपदी-चीरहरण के दिन शाम को अश्वत्थामा उदास सा बैठा अपनी कायरता को कोसता है। भरी राजसभा में रजस्वाला एकवस्त्रा द्रौपदी को दरबार में नंगा किया जा रहा था। फिर भी वह चूप बैठा क्यों रहा ? आकाश के टुकडे - टुकडे कर देने वाली मर्मभेदी आवाज से वह पुरुष जाति को पुकार रही थी।इसके उपरान्त भी वह चूप क्यों रहा ? माता कृपी के सामने अपने मन की संचित भडास निकल देता है। " मेरे संस्कारों में ऐसी क्या गड़बड़ी थी जो मेरा खून गरम नहीं हुआ ? मेरे शब्द फुंकारकर खड़े नहीं हुए ? [89] इसके लिए वह अपनी माता को भी दोषी मानता है। उसके मन में कें सामने सवाल खड़ा हो जाता है की उसकी माँ कृपी ने उसे बचपन से अन्याय और अत्याचार, अन्याय का विरोध करने की शिक्षा क्यों नहीं दी ? द्रोणाचार्य तो न पांडवों के रक्त संबंधी थे न कौरवों के वे दोनों के आचार्य थे। फिर भी वे उस वक्त चुप्पी साधे क्यों बैठे ? उनका आचार्यत्व कहाँ गया ? उन्होंने कौरवों पर नैतिक अधिकार क्यों नहीं जमाया ? इन सवालों के उलझन में वह छटपटाने लगता है। उसकी घुटन भरा असंतोष द्रोणाचार्य के आगमन होते ही फूट पडता है। वनवास जाने के पहले पांडव गुरु द्रोणाचार्य से मिलने आये नहीं इसका अपना पिता से स्पष्टिकरण मांगता है। द्रोणाचार्य उनके राजसभा में चुप्पी धारण करने के लिए पत्नी कृपी को जिम्मेदार समझते है। अपनी दमघोंटू छटपटाहट की असहयनीय बेचैनी के पीछे कृपी का उनके प्रति किया गया व्यवहार ही जिम्मेदार है। उसने कभी भी उन्हें चैन से रहने नहीं दिया। दिन रात उसे दरिद्रय से शिकायत थी। कभी भी उसने द्रोण की धनुर्विद्या पर अभिमान का एक शब्द नहीं कहा उल्टा द्रूपद के सामने हाथ फैलाने भीख माँगने भेजा। कृपी ने ही उन्हें राजकीय अन्न की दासता में धकेलकर

सुविधाभोगी बनाने के कारण भुख यह उनके सिध्दांत से भी बडी हो गयी। प्रतिशोध ने विवेक को जीत लेने का कारण उनके मन नें स्वाभिमान की भावना कभी प्रबल नही हुई - " उस राजकीय अन्न की दासता ने मेरा विवेक खरीदा। मेरी न्याय बुध्दी खरीदी । मुझे एकलव्य का अंगुठा काटना पडा। पक्षपात, क्षुद्रता ने मेरा स्वत्व छिन लिया। अश्वत्थामा उस समझौते ने मुझे कभी सही आदमी नहीं बनने दिया। तब में सही आदमियों का कहाँ से निर्माण करता ? .... उस दासता ने मुझे सुरक्षा दी। झूठी प्रतिष्ठा दी सुविधाओं ने मेरी धार भोथरी कर दी। मेरी भीतर के उस आदमी को जगाया तो बदला लेता है, जो अपने अहंकार को संसार से बडा मानता है। द्रुपद से बदला लेने के लिए मैंने अपने विद्यार्थियों को युध्द का उन्माद दिया। उनका उपयोग अपने स्वार्थ के लिए किया, कृपी। मै हर दिन छोटा आदमी होता गया।" [90] अब इस स्थिति में परिवर्तन करना अब संभव नहीं समझते। जो उन्हे अन्न और वस्त्र देता है उसी का ही साथ देने के लिए विवश बन गये है। अपने दारिद्रय से बदला लेने की हिंसक भावना स्वयं: उन्हें ही ग्रस रही है। द्रोणाचार्य आत्मविश्वासहीन पुरुष बनकर अनेक विध हीनताओं से ग्रसित - निढाल होकर छटपटाते है उसका यथार्थ चित्रण नाटककारने किया है।

4.11.9 'लघुता'का एहसास -

द्रोणाचार्य अपने प्रिय शिष्य अर्जून का हित देखते हुए एकलव्य का अंगुठा काट लेते है। लेकिन उसका उल्टा परिणाम अर्जून के उपर होता है। उसका मन अपराध की भावना से लबालब भर जाता है। षडयंत्र द्वारा किसी को कुचलकर 'सर्वश्रेष्ट धनुर्धर' का पद पाना यह अपनी कमजोरी समझता है। वह निष्कलंक सफलता पाने के लिए उत्सुक है। एकलव्य को शस्त्र विद्या में हराए बिना संदेह से पूरे आत्मिक समाधान प्राप्त नहीं कर सकता। इसी विचारों से उसका मन आक्रंदित हा उठता है। 'गुरु द्रोणाचार्य' एकलव्य के साथ साथ उसके उपर भी अन्याय कर रहे है ऐसा उसे लगता है। जब प्रबल प्रतिस्पर्धी सामने नहीं होगा तब स्पर्धा होगी तो किससे?इस भावना से बेचैन होकर अर्जुन द्रोणाचार्य से कहता है - " मै संसार के सबसे बडे धनुर्धर को अपनी आखों से देख चुका हूँ। भविष्य मे जब कभी मुझे कोई संसार का सबसे बडा धनुर्धर कहेगा तो उस समय एकलव्य का गरम खुन से सना हुआ पंजा मेरा मजाक उडाएगा। गुरुदेव, मै अपनी अपराध भावना को कभी नहीं जीत सकुंगा।-" [91] अर्जुन का अन्तर्द्वंद अत्यंत प्रभावशाली एव यथार्थ रुप में चित्रित हुआ है। द्रोणाचार्य ने लिया हुआ निर्णय द्रोणाचार्य की कुंण्ठीत

मनोवैज्ञानिक ग्रंथीयों का परिणाम ही है। स्वयंभू एकलव्य की प्रतिभा देखकर द्रोणाचार्य को अपनी सीमित क्षमता सीमा रेषाओं का ज्ञान होता है। एकलव्य की तुलना में अर्जुन की प्रतिभा कमजोर दिखाई देती है। यह कटू सत्य सहजतासे स्वीकार न पाने के कारण मन के उपर का संतुलन ढल गया। क्रोध और क्रूरता की भावनाएँ प्रबल हुई। साथ साथ राजकीय कर्तव्य के पालन करने की भावना ने उन्हे पूरी तरह से संवेदनाहीन बना डाला। डॉ. शंकर शेष जी ने एकलव्य की गहरी व्यथा, द्रोणाचार्य की निराशा और अर्जुन की छटपटाहट दिखाते हुए मनोवैज्ञानिक समस्या को बडी सूक्ष्मता से चित्रित किया है।

4.11.10 वितृष्णा, विक्षोभ एवं ग्लानी -

प्रेसिडेन्ट पुत्र राजकुमार को नक़ल करते रंगे हाथ पकडने के बाद चंदू तुरंत कारवाई की मांग करता है तब प्रो. अरविंद दुविधा में पड जाते है। राजकुमार का विरोध किया जाय तो उनकी हत्या होगी। यदि उसका साथ दिया जाय तो सामाजिक हत्या होगी। हत्या से बच न पाने के कारण गहरी चिन्ता में डूब जाता है। तभी विमलेंदू की आत्मा प्रकट होती है। कहाँ से आये हो यह पुछने पर वह आत्मा जो जबाब देती है उससे अरविंद के मन की स्थिति का सही मूल्याकंन हुआ है। विमलेंदू की आत्मा कहती है - '' तुम्हारे मन की अंधेरी गलियों से बहुत अंधेरा है वहाँ। सीलनभरी हजारों सुरंगे और तहखाने है वहाँ। कितना कचरा जमा कर रखा है तुमने? मुझे भी बडी मुश्किल से रास्ता मिला। '' [92] यह कथन अरविंद की मानसिक स्थिति का यथार्थ प्रतिबिम्ब दिखलाता है। चंदू भी उसके व्यक्तित्व की निरर्थक शब्द थूंकने वाला नपुंसक बुध्दीवादी कहकर कटू आलोचना करता है। बार बार व्यवस्था के साथ समझौता कर देने की विवशता अरविंद के मन ग्लानी से भर देता है। उसके व्यक्तित्व को हीन, कुष्ठित बना देता है। उसकी अन्तर्द्वन्दग्रस्त मानस में उठती तरंगे लीला के सामने खुलकर रखता हुआ अरविदं कहता है - '' आत्मज्ञान हो गया है मुझे अपने क्षुद्र होने का आत्मज्ञान। सड़े हुए आटे में बिलबिलाने वाला कीडा होने का आत्मज्ञान ..... समझौते के फंदे पर अपने आपको पचिसों बार लटकाने वाल मैं..... दूसरो की नकाब उतारने की कोशिश में खुद नंगा हो जानेवाला मै..... मुझपर थूँको .... मेरी चमड़ी अब गेंडे की तरह मोटी हो गयी है। मैं जानता हूँ कि सड़े-गले मकान का मलबा गिरनेवाला है, फिर भी आँखे मूँदकर अपनी रोटी खा रहा हूँ।''[93] अरविंद अपनी अकर्मण्यता, निकम्मपन और आत्मविश्वास विहीनता के स्थिति का अनुभव तो करता है। पर सिवाय नाकारा छटपटाहट के अन्य कुछ भी पाने मे समर्थ नही होता। व्यवस्था के साथ

समझौता करते करते उसका मन वितृष्णा, विक्षोभ एवं ग्लानी से भर जाता है। हर वक्त यंत्रणाओं का शिकार बनकर चरित्रहीन बन जाता है। इसी लिए हर वक्त चेहरा बदलकर जीने के अधिन हो जाता है। अरविंद मे स्थित इस विकृति को उजागर करता हुआ विमलेंदू का - " चेहरे केवल जिन्दा रहते बदले जा सकते है .... पर मृत्यू चेहरा हमेशा उतारकर रख जा सकते है।" [94] यह कथन जीवन का मनोवैज्ञानिक सत्य प्रस्तुत करता है।

4.11.11 लालसा -

'पोस्टर' मजदूरों में व्याप्त मनोवैज्ञानिक समस्या को नाटककार ने बड़ी सुक्ष्मता से चित्रित किया है। गाँव का पटेल मजदूरों के अज्ञान का फ़ायदा उठाकर उनकी धर्म भावना के साथ खिलवाड़ करता है। पाप और पुण्य की कल्पना के साथ जकड़ कर आर्थिक शोषण करने हेतू नकली साधु अखंडानंद को बुलाकर उसके द्वारा स्वर्ग और नरक की तसवीर दिखाता है। अखंडानंद का हर वाक्य मजदूरों को ब्रम्हवाक्य, वेद-वाणी प्रतित होती है। कारखाने मे तसवीरें चिपकाने के बाद मजदूर लोग कुछ भय से और कुछ आशा से इन चित्रों को देखते है। कुछ की आखों में अगले जनम में कुछ पाने की लालसा - लेकर वे विभिन्न प्रतिक्रिया व्यक्त करते है।

"..... जरुर साले ने मालिक के साथ गद्दारी की होगी .....

..... मालिक की सेवा का फल पा रहा है साला .....

..... हमको सरग मिलेगा प्यारे .....

और नहीं तो क्या .....

..... हमको सरग ही मिलेगा भैया " [95]

4.11.12 निर्लिप्तता -

अंधश्रध्दाओं के कारण मन पर पडा गहरा प्रभाव उन्हें को भावनाविवश कर देता है। मजदूरों का कल्लू को जब मुकादम बनाया जाता है। चैती को हवेली में ड्युटी लगाई जाती है। तब इसके पीछे का पटेल के षडयंत्र की जानकारी देने के बाद गाँववालों में व्याप्त मनोविकृति पर व्यंग कसते हुए गुरुजी कल्लू को बताते है - " देखना यही होगा, यही होता आया है। पूरा गाँव जानता है। हवेली में ड्युटी लगाने

का मतलब ..... देखना गाँव में इसको लेकर थोडी-बहुत तानाकसी ..... हॉसी-मजाक होगा..... इससे ज्यादा कुछ नहीं। अब तो उसको कोई खास बुरा भी नहीं मानता। आदत पड गयी है लोगों को।'' [96] मनोबल के अभाव में मानसिक और शारीरिक कमजोरियों की व्यधियाँ इकठ्ठा हो जाती है। गुलामी से भरी इस मनोवैज्ञानिक ग्रंथियोंका सही सही चित्रण आंकने में नाटककार सफ़ल हुए है।

निष्कर्ष -

डॉ. शंकर शेष जी ने विविध समस्याओं को नाटक का आधार मानकर यथार्थ के धरातलपर 'घरौंदा', 'एक और द्रोणाचार्य' और 'पोस्टर' जैसी रचनाओं का सृजन किया है। विभिन्न पृष्टभूमि पर समस्या का सशक्त चित्रण करने में सफलता अर्जित की है।

घरौंदा नाटक की मूल समस्या 'मकान' की है। यह महानगरों में व्याप्त चिरंतन चलनवाली ल ढ़ाई का' जीवंत दस्तावेज है। इस नाटक के प्रमुख पात्र सुदीप, मोदी और छाया है। नाटक में बाह्य संघर्ष से जादा आंतरिक संघर्ष दिखाई देता है। 'सुदीप' के माध्यम से नाटककारने गलत मार्ग का इस्तेमाल व्यक्ति को किस प्रकार पतनोन्मुख कर देता है यह दिखाने की कोशिश की है। सुदीप मोदी के विरुध्द 'वर्गसंघर्ष' करने का ऐलान करता है। अपनी 'अर्थ प्राप्ति' की महत्वाकांक्षा पूरी करने की कोशिश उसे अपने प्रेमिका का भी सौदा करने के लिए भी मजबुर कर देती है। सुदीप का चरित्रचित्रण पाठकों को अंतर्मुख कर देने में सक्षम है। 'होटल' संस्कृति के आड में नैतिक मूल्यों का ढ़हता जाना उपभोगवादी संस्कृति के दु:परिणामों को दर्शाता है।

'एक और द्रोणाचार्य' नाटक प्रथमदर्शी शिक्षा समस्या पर आधारित दिखाई देता है लेकिन विभिन्न संदर्भ साथ लेकर विवेच्य सभी समस्याएँ प्रस्तुत होती है। 'मिथक' के संदर्भ से प्राचीन और आधुनिक युग में व्याप्त सभी हीन प्रवृत्तियों का लेखा जोखा पेश करने में सफ़लता प्राप्त की है। 'अर्थ की कमी' व्यक्ति को किस प्रकार असंतुष्ट, विपथगामी बना देती है, यह द्रोणाचार्य और अरविंद के माध्यम से दिखाने का प्रयत्न किया है। जब द्रोणाचार्य द्वारा 'एकलव्य का किया गया शोषण' की एक ही घटना 'कृरताभरी महत्वाकांक्षा की समस्या', 'जातियता की समस्या' और 'वर्गसंघर्ष' की समस्या ऐसी तीन विभिन्न समस्याओं को विभिन्न संदर्भों के साथ प्रस्तुत होती है। अरविंद और द्रोणाचार्य का पतन मूल्योके अवमूल्यनको दर्शाता है। विमलेंदू की प्रेतआत्मा हर पात्र की अंतरिक स्थिति से अवगत कराती हुई दिखाई

देती है। अनुराधा और द्रौपदी इन दोन पात्रों के माध्यमसे नारी समस्या मुखरित हो उठी है। जो पाठकों में समस्या की तरफ देखने सुविस्तुत दृष्टि का निर्माण करती है।[6] ऐतिहासिक परिप्रेक्ष में सामाजिक समस्याओं के सशक्त अभिव्यक्ति के रुप में यह नाटक चिरंतन स्मरण में रहेगा।

'पोस्टर' नाटक तो आदिवासियों की करुण-गाथा है। आदिवासी लोगों में गरीबी, निरक्षता की समस्या, आर्थिक शोषण की समस्या न्याय कानून की समस्या, धार्मिक शोषण की समस्या सभी समस्याएँ एकसाथ दिखाई देती है। नारी का यौन शोषण तो नाटक का केंद्रबिंदू है। 'वर्गसंघर्ष की समस्या' का उद्‌भव, विस्तार, चरणसीमा सभी बिंदूओं का ज्वलंत दस्तावेज बनकर 'पोस्टर' में उभरता है। आशा-आकांक्षाओं को कुचलने वाले दमनकारी प्रवृत्तियों की कटू आलोचना करते हुए सामाजिक-आर्थिक संदर्भों में न्याय की भूमिका प्रस्तुत की है।

विवेच्य नाटकों की सभी पात्रों का मनोवैज्ञानिक चित्रण अत्यंत गहराई में जाकर किया है। उन्होंने केवल यथार्थ अथवा आदर्श को महत्व न देकर आदर्श एवं यथार्थ का उचित मात्रा में समन्वय स्थापित किया है। समस्याचित्रण में कहीं भी असंतुलन अथवा अतिरेक नहीं दिखाई देता। गहरी सुक्ष्मता के साथ व्यापक दृष्टि रखकर समस्या चित्रण करने में डॉ. शंकर शेष सफल रहें है।

- संदर्भ सूची -

1 डॉ. शंकर शेष, घरौंदा, पृ. 10-11.

2. वही, पृ. 15.

3. वही, पृ. 28

4. वही, पृ. 27

5.(सं.) डॉ.विनय, शंकर शेष रचनावली-तीन, पृ. 284.
(डॉ. शंकर शेष - पोस्टर)

6. वही, पृ.283.

7. वही, पृ. 294

8. वही, पृ. 294

9. वही, पृ. 289

10. डॉ. शंकर शेष, एक आर द्रोणाचार्य, पृ. 44.

11. वही, पृ. 15

12. वही, पृ. 9

13. (सं.) डॉ.विनय, शंकर शेष रचनावली-तीन, पृ. 301
(डॉ. शंकर शेष - पोस्टर)

14. वही, पृ. 310

15. वही, पृ.302

16. वही, पृ. 291

17. वही, पृ. 308

18. वही, पृ. 308

19. वही, पृ.308

20. वही, पृ. 308

21. वही, पृ. 315-316

22. वही, पृ.318

23. डॉ.शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ. 107

24. डॉ. शंकर शेष, घरौंदा, पृ. 12

25. वही, पृ. 79

26. वही, पृ.48

27. (सं.) डॉ.विनय, शंकर शेष रचनावली, पृ. 299

28. वही, पृ. 309

29. डॉ. शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ. 16

30. वही, पृ. 26

31. वही, पृ. 32

32. वही, पृ. 24

33. डॉ. गिरिराज शर्मा (गुंजन) हिंदी नाटक मूल्य संक्रमण, पृ.

34. (सं.) डॉ. विनय, शंकर शेष रचनावली, तीन, पृ. 285.
(डॉ. शंकर शेष पोस्टर)

35. . डॉ. शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ. 12-13.

36. वही, पृ. 13

37. वही, पृ. 106

38. वही, पृ. 87-88

39. वही, पृ. 86-87

40. वही, पृ. 19

41. वही, पृ. 64

42. वही, पृ. 67-68

43. डॉ. शंकर शेष, घरौंदा, पृ. 18.

44. वही, पृ. 48

45. वही, पृ. 57

46. डां. गिरिराज शर्मा (गुंजन), हिंदी नाटक मूल्य संक्रमण पृ 16

47.(सं.) डॉ. विनय, शंकर शेष रचनावली-तीन, पृ. 286.
(डॉ.शंकर शेष- पेास्टर)

48. वही, पृ. 305

49. वही, पृ. 314

50. वही, पृ. 306

51. वही, पृ. 311

52. वही, पृ. 309

53. डॉ. शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ. 13

54. वही, पृ. 53-54.

55. वही, पृ.54

56. डॉ. शंकर शेष, घरौंदा, पृ. 57

57. वही पृ. 87

58. डॉ. किरण बाला, समकालीन हिंदी कहानी और समाजवादी चेतना पृ. 264

59.(सं.) डां. विनय, शंकर शेष रचनावली-तीन, पृ. 295-96
(डॉ. शंकर शेष - पोस्टर)

60. वही, पृ. 297

61. डॉ. शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ. 50

62. वही, पृ. 51

63. डॉ. शंकर शेष , घरौंदा, पृ. 75

64. वही, पृ. 79 •

65. (सं.) डॉ.विनय, शंकर शेष रचनावली-तीन, पृ. 288.
(डॉ. शंकर शेष - पोस्टर)

66. वही, पृ. 309

67. वही, पृ.290

68. वही, पृ. 302

69. डॉ. सुरेश एवंम, डॉ. विणा गौतम, राजपथ से जनपथ नटशिल्पी शंकर शेष, पृ. 42

70. डॉ. शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ. 46

71. वही, पृ. 55

72. वही, पृ. 32

73. डॉ. शंकर शेष, घरौंदा, पृ. 47.

74. डां.शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ. 30-31.

75. वही, पृ. 107

76. वही, पृ. 53

77. डॉ. शंकर शेष , घरौंदा, पृ. 15.

78. (सं.) डॉ.विनय, शंकर शेष रचनावली, तीन, पृ. 301.
(डॉ. शंकर शेष - पोस्टर)

79. वही, पृ. 304

80. डॉ. विणा गौतम, आधुनिक हिंदी नाटकों में मध्यवर्गीय चेतना, पृ. 195.

81. डॉ. कमल गुप्ता, हिंदी उपन्यासों में सामन्तवाद पृ. 407.

82. डॉ. शंकर शेष, घरौंदा, पृ. 36.

83. वही, पृ. 55.

84. डॉ. रमेश तिवारी, हिंदी उपन्यास साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन, पृ. 60

85. डॉ. शंकर शेष, घरौंदा, पृ. 68.

86. वही, पृ. 67

87. वही, पृ. 51.

88. वही, पृ. 89.

89. डॉ. शंकर शेष, एक और द्रोणाचार्य, पृ. 81.

90. वहीं, पृ. 86-87.

91.वही, पृ. 55.

92. वहीं, पृ. 37.

93. वही, पृ. 74-75

94. वहीं, पृ.37

95. डॉ. शंकर शेष, पोस्टर, पृ. 122.

96. (सं.) डॉ. विनय, शंकर शेष रचनावली-तीन, पृ. 314.